देश विदेश की लोक-कथायें

पब्लिकेशन्स डिवीजन
मिनिस्ट्री ऑफ़ इन्फ़ार्मेशन एण्ड ब्राडकास्टिंग
गवर्नमेण्ट ऑफ़ इण्डिया

सूचीपत्र

भूमिका

मनुष्य स्वभाव से कहानीप्रिय है। विशेषकर बच्चों को सिखाने-पढ़ाने का कहानी एक सर्वसुन्दर माध्यम है, उनकी कल्पना को ऊंची उड़ान देने का एक सहज साधन है। देश-विदेश की प्रसिद्ध लोक-कथाओं का यह संग्रह इस उद्देश्य से निकाला गया है कि हमारे देश के बच्चे अन्य देशों की लोक-कथाओं से परिचित हों और अन्तर्राष्ट्रीय भावना बढ़े।

प्रत्येक देश के लोक-जीवन और लोक-वार्ता में अटूट सम्बन्ध है, लोक-साहित्य और लोक-जीवन की परम्पराएं एक सी हैं। लोक-कथाएं अनेक रूप में लोक जीवन को छापे हुए हैं। अतएव इन लोक-कथाओं के द्वारा हमारे बच्चे विदेशों के लोक-जीवन से परिचित होंगे। अनेक देश-विदेश की लोक-कथाओं का आधार भारतीय लोक कथाओं से मिलता जुलता है। जिस देश या प्रदेश में वे कहानियां पनपती हैं वहाँ लोक-जीवन की छाप उस पर पड़ जाती है। जिस तरह ईंट-गारा सब एक जगह एक सा है, पर रुचि और ज़रूरत के अनुसार मनुष्य मकान का आकार बना लेता है।

लोक-कथाओं की शैली बहुत ही सुन्दर और सजीव होती है। इनके निर्माता और उनकी शैली पर मुग्ध होकर एक बार पं० जवाहरलाल जी ने कहा था—'मुझे कई बार इस बात पर आश्चर्य होता है कि ये आदमी और औरतें जिन्होंने कि ऐसे सजीव सपनों और कल्पनाओं के सहारे ऐसे अद्भुत और दिलचस्प कथानक संजोये हैं कैसे रहे होंगे और विचार और कल्पनाओं की किस सोने की खान में से उन्होंने खोदकर ऐसी चीज़ों को निकाला होगा?'

लोक-कथाएं सदियों से मनुष्यों का मनोरंजन करती आई हैं। आशा है यह पुस्तक भी अपने इस ध्येय को पूरा करने में सफल होगी।

सम्पादिका
सावित्री देवी वर्मा

सोने का बकरा

मन्मथनाथ गुप्त

बहुत दिन पहले एक राजा रहता था, जिसके केवल एक नन्ही-सी लड़की थी। राजकुमारी गोरी-चिट्टी थी, उसके बाल सुनहले और घुंघराले, आँखें नीली और गाल गुलाबी थे। वह इतनी सुन्दर थी कि जो भी उसे देखता, वह उसे प्यार करने लगता था। स्वाभाविक रूप से उसके साथ शादी करने के लिये कई लोग घूमा करते थे। पर उस पर जो स्त्री संरक्षिका के रूप में तैनात थी, वह किसी को राजकुमारी के पास फटकने नहीं देती थी। नतीजा यह हुआ कि राजकुमारी की अभी तक शादी नहीं हुई थी।

एक दिन संरक्षिका के दिमाग़ में एक विचार आया, और वह राजा के सामने जाकर बोली—"महाराज! आपकी कन्या से शादी करने के लिये इतने लोग इच्छुक हैं कि यह बताना बहुत कठिन है कि किसे चुना जाय और किसे छोड़ा जाय। इस पचड़े से बचने के लिये मेरे मन में एक विचार आया है, यदि आप कहें तो मैं इस विचार को आपके सामने रखूं।"

राजा बोला—"मैं भी इसी बात पर विचार किया करता हूँ। जो कुछ भी हो तुम अपना विचार बतलाओ।"

संरक्षिका बोली—"राजकुमारी के लिये हम जमीन के नीचे एक बहुत सुन्दर महल बनावें। उस महल के बाग़ में जाने के लिये सीढ़ियाँ हों, और जहाँ सीढ़ियाँ खत्म होती हों, वहीं पर एक लोहे का चोर दरवाज़ा हो। यही उस महल में जाने का एकमात्र दरवाज़ा होगा। जो लोग राजकुमारी से शादी करने के लिये आवें, उन सबको तीन दिन का समय दिया जाय कि वे सीढ़ियों से होकर राजकुमारी का पता लगायें। जो इस समय के अन्दर राजकुमारी का पता नहीं लगा पावेगा, उसे तीसरे दिन शाम को मौत के घाट उतार दिया जाय।"

राजा को यह योजना बहुत पसन्द आई। संरक्षिका को इस बात से बहुत ही खुशी हुई और वह इस बात की प्रतीक्षा करने लगी कि राजा उस महल को बनाने का हमें हुक्म दे।

राजा ने जब संरक्षिका को सामने खड़ा पाया तो बोला—"जाओ, वह महल बनवा दो।"

संरक्षिका चली गई, और फ़ौरन ही राज और बढ़ई आदि बुला कर उस काम को शुरू करा दिया। दिन-रात काम चलता रहा, और चालीस दिन के अन्दर सब कुछ बन कर तैयार हो गया। जब सब तैयार हो गया, तो राजकुमारी को उस महल में भेज दिया गया। रोज़ अनेक नौजवान आते, और उन्हें तीन दिन का समय दिया जाता। जब तीन दिन समाप्त हो जाते, तो उनका सिर काट लिया जाता। संरक्षिका को इस बात से

बहुत खुशी हुई क्योंकि उसका स्वभाव बड़ा ही अत्याचारी था। इतने लोगों के सिर काट लिये गये कि संरक्षिका ने उनके सिरों से पास ही एक मीनार बनवा दी।

राजा को यह बताया गया कि कोई आया है जो राजकुमारी को एक बहुत ही शानदार सोने का बकरा देना चाहता है

पड़ोस के एक राज्य में भी यह खबर पहुँची। वहाँ के राजा के तीन बेटे थे। एक दिन सबसे बड़े बेटे ने राजा से कहा—"महाराज! मैं छिपी हुई राजकुमारी का पता लगाने के लिए प्रण कर चुका हूँ। मैं उसे खोज निकालूंगा और उससे शादी करूँगा।"

राजा ने बहुतेरा समझाया कि बेटा इस बात से बाज आओ, पर वह नहीं माना। राजा उसको जितना ही समझाता रहा, राजकुमार की ज़िद उतनी ही बढ़ती गई। अन्त में जब राजा ने देखा कि वह किसी प्रकार माननेवाला नहीं है, तो यात्रा की तैयारियाँ शुरू हो गई। राजा ने लड़के को धूमधाम से विदाई दी और कुछ दूर तक राजा और दो राजकुमार भी बड़े राजकुमार के साथ गये।

राजकुमार ने जाकर राजकुमारी के पिता से कहा—"मैं आपकी लड़की से शादी करना चाहता हूँ।"

राजा बोला—"बेटा, तुम अभी कम उम्र हो, और तुमने दुनिया में बहुत कम बातें देखी हैं। इस ज़िद को छोड़ो। कितनी ही और राजकुमारियां हैं, और उनमें से कई मेरी कन्या से अच्छी भी हैं। बात यह है कि मेरी कन्या को कहीं पर छिपा कर रखा गया है, यदि तुम इस झगड़े में पड़ते हो, तो तीन दिन के अन्दर उसे खोज निकालना पड़ेगा, और यदि तुम खोज नहीं पाये तो नियम यह रखा गया है कि तुम्हारा सिर काट लिया जावेगा।"

इस पर नौजवान राजकुमार बोला—"जो पैदा हुआ है, वह तो एक दिन मरेगा ही। जो मेरी तकदीर में लिखा है, वह तो हो कर ही रहेगा, फिर काहे को डरना। इसलिए मैंने तो यह तय कर लिया है कि मैं इससे पीछे नहीं हटूंगा।"

उस दिन तो राजकुमार विश्राम करता रहा, पर अगले दिन से उसने राजकुमारी की तलाश शुरू की। तीन दिन तक वह खोजता रहा, पर जब तीसरे दिन की शाम के समय भी वह राजकुमारी को खोजने में समर्थ नहीं हुआ, तो उसका सिर काट लिया गया, और सिरों की मीनार में एक और सिर बढ़ा।

जब कुछ समय निकल गया, और बड़ा राजकुमार नहीं लौटा, तो मंझले राजकुमार ने राजा से कहा—"पिता जी! अब मैं अपने भाई की खोज में जाऊँगा।"

राजा बोला—"बेटा, तुम्हारे भाई का सिर इस समय सिरों की मीनार में रखा होगा, ऐसा हमें जान पड़ता है। यदि वह सफल होता, तब तो खबर मिल जाती।"

इस पर मंझले राजकुमार ने कहा—"मैं भी उसी काम में जाऊँगा जिस काम में मेरे भाई गए थे।"

राजा ने मझले राजकुमार को समझाया, पर वह नहीं माना। अन्त में राजा ने जब यह देखा कि वह किसी तरह नहीं मानेगा, तो उसने उसी प्रकार से उसकी भी विदाई कर दी। मंझला राजकुमार उसी प्रकार से तीन दिन तक खोजता रहा, अन्त में असफल होने के कारण उसका भी सिर सिरों की मीनार में पहुँच गया। जब कई दिनों तक मंझला राजकुमार नहीं लौटा, तो छोटा राजकुमार भी राजा से विदाई लेकर उसी जगह पहुँचा। रास्ते में वह एक नगर में पहुँचा, जहाँ वह एक सुनार से मिला, और उसे उसने सोने से भरी हुई दो बोरियां दीं। वह सुनार से बोला—"जल्दी से इससे सोने

का एक बकरा बना दो। यह बकरा इतना बड़ा हो कि मैं इसके अन्दर छिप सकूं। बाकी सोना तुम अपने पास रख लो।"

सुनार इस बात से बहुत खुश हुआ और उसने फ़ौरन काम शुरू कर दिया। अगले दिन सवेरे तक सोने का बकरा तैयार हो गया, और वह राजकुमार उसकी कारीगरी देख कर बहुत खुश हुआ। वह बोला—"अब एक काम यह करो कि इस बकरे को ले जाकर राजकुमारी के पिता को दे दो।"

इसके बाद वह स्वयं सोने के बकरे के अन्दर घुस गया और सुनार मज़दूरों को बुलवा कर उसे ले चला। राजा को यह बताया गया कि कोई आया है जो राजकुमारी को एक बहुत ही शानदार सोने का बकरा देना चाहता है। जब राजा ने यह बात सुनी तो उसने उससे कहा कोई बात नहीं, किसी भी हालत में राजकुमारी का दिल तो बहलाना ही है। इसलिये उन्होंने हुक्म दिया कि सोने के बकरे को राजकुमारी के पास भेज दिया जाय। राजा के बहुत से विश्वस्त सिपाही बकरे को लेकर राजकुमारी के पास पहुँचाने गये। राजकुमारी ने उसे अपने कमरे के एक कोने में रखवा लिया। छोटे राजकुमार ने बकरे के अन्दर से राजकुमारी को देखा, तो उसे बहुत आश्चर्य हुआ, क्योंकि राजकुमारी बहुत सुन्दर थी।

बकरे के अन्दर रहते-रहते छोटे राजकुमार को भूख लगने लगी। राजकुमारी के लिये रोज़ रात को खाना परोसा जाता था, पर छोटा राजकुमार सोने के बकरे के अन्दर से निकल कर सारा खाना खा लिया करता। राजकुमारी बहुत कम खाती थी, फिर भी जब कई दिनों तक उसने देखा कि उसके लिये बहुत थोड़ा खाना रहता है तो उसने सोचा कि यह किसी नौकर का काम है, इसलिये वह पहरे पर इस प्रकार बैठी रही कि किसी को पता नहीं लगा। यहाँ तक कि सोने के बकरे के अन्दर बैठे हुए राजकुमार को भी कुछ पता नहीं लगा। इसलिये वह रोज़ के समय पर निकल कर खाना खाने लगा, जब वह खाना खा चुका, और बकरे के अन्दर जाने लगा, तो राजकुमारी ने एकाएक बत्ती जला दी, और दोनों ने एक-दूसरे को देख लिया। थोड़ी देर तक वे एक दूसरे को देखते रहे, और अन्त में राजकुमारी ने पूछा—"तुम कौन ?"

छोटा राजकुमार बोला—"मैं राजकुमार हूँ। मेरे दो बड़े भाई तुम्हारे कारण सिर गंवा चुके हैं, इसीलिये मैंने तुम्हें पाने के लिये यह तरीका निकाला।"

राजकुमारी अपनी संरक्षिका के कारनामों से ऊब चुकी थी। दोनों ने मिलकर यह तय किया कि दिन भर तो राजकुमार बकरे के अन्दर रहेगा, और जब सब लोग चले जाएंगे, तो दोनों मिल कर बातचीत किया करेंगे। ऐसा बहुत दिनों तक चला। एक दिन राजकुमारी ने कहा—"ऐसा तो हमेशा चल नहीं सकता। अब कुछ करना चाहिए। कोई ऐसी तरकीब करनी चाहिए कि हम यहाँ से छुटकारा पा जायें।

राजकुमार ने कहा—"इसकी एक ही तरकीब है। वह यह कि इस बकरे की एक टाँग तोड़ दी जाय, और फिर तुम अपने पिता के पास यह खबर भेजो कि बकरे की टाँग टूट गई है, इस लिए उसकी मरम्मत की जाय। इस बहाने से मैं बाहर चला जाऊँगा, और फिर निकल कर आ जाऊँगा।"

यद्यपि राजकुमारी यह नहीं समझ पाई कि राजकुमार किस प्रकार लौटेगा, फिर भी उसे अब तक राजकुमार पर इतना विश्वास हो चुका था कि उसने बिना कुछ पूछे ही इस प्रस्ताव पर अपनी रज़ामन्दी ज़ाहिर कर दी।

जो सचमुच बाँदियाँ थीं, वे तो मुहर बटोरने के लिये झुक गई, पर राजकुमारी नहीं झुकी

राजा को ख़बर भेजी गई, और यथासमय सोने का बकरा राजा के यहाँ पहुँचाया गया। वहाँ से वह बकरा पहलेवाले सुनार के घर पहुँचाया गया। राजकुमार सुनार से

मिला तो था ही, वह बाहर निकला, और सीधे जाकर राजा से बोला—"मैं आपकी कन्या से शादी करना चाहता हूँ।"

राजा ने उसको बहुत मना किया, पर उस पर कोई असर नहीं हुआ। अन्त में राजा ने मजबूरी से उस राजकुमार को अपने सिपाहियों के सुपुर्द किया। राजकुमार को अच्छी तरह मालूम था कि राजकुमारी के यहाँ पहुँचने का दरवाजा किधर है, पर वह दो दिनों तक इधर उधर भटकता और टक्करें मारता रहा मानो उसे कुछ मालूम ही नहीं है। तीसरे दिन वह राजा के सामने आया और बोला—"महाराज क्या मैं आगे अपनी खोज को जारी रख सकता हूँ?"

संरक्षिका राजकुमार की बग़ल में ही खड़ी थी। वह डर रही थी कि कहीं शिकार हाथ से न छूट जाय। वह चाहती थी कि सिरों की मीनार में इसका सिर भी रखा जाय। पर राजा ने कहा—"अवश्य, तुम अपनी खोज जारी रख सकते हो, पर यह शर्त तो याद है न कि यदि आज शाम तक तुम रास्ता नहीं खोज पाये तो तुम्हारा सिर सिरों की मीनार में दिखलाई देगा।"

राजकुमार ने कहा—"मुझे सब मालूम है। मैं यह चाहता हूँ कि आपके राजमहल से जो सरोवर लगा हुआ है, उसे खाली कराया जाय।"

राजा मजबूर थे। फ़ौरन ही लोग जुट गये और सरोवर का सारा पानी निकाल दिया गया। पानी निकलते ही पाताल के राजमहल का दरवाजा दिखाई पड़ा। तब राजकुमार बोला—"यह दरवाजा खोला जाय।"

संरक्षिका ने जो यह सुना तो वह बहुत परेशान हो गई क्योंकि चाभी उसी के पास थी। पर मजबूरी थी, और उसी समय उसे चाभी देनी पड़ी। वह बोली—"खोलने को खोल लो, पर मैं एक मिनट में तुम्हें भीतर बुलाऊँगी। तब तक प्रतीक्षा करो।"

राजकुमार बाहर खड़ा रहा, और संरक्षिका भीतर गई, और उसने राजकुमारी को बुलाकर जल्दी से उसे एक बाँदी की पोशाक पहना दी। फिर उसे सब बाँदियों में रख दिया। इसके बाद राजकुमार बुलाया गया, और उससे कहा गया कि तुम इनमें से राजकुमारी को ढूँढ निकालो।

यद्यपि राजकुमार ने राजकुमारी को बहुत पास से देखा था, फिर भी उस दुष्ट संरक्षिका ने बाँदियों को इस तरह सजाया था कि एकाएक राजकुमारी उसकी पहचान में नहीं आई। इस पर राजकुमार ने कुछ स्वर्ण-मुद्राओं को लेकर बाँदियों के गिरोह में लुटाने के ढंग से डाल दिया। इस पर जो सचमुच बाँदियाँ थीं, वे तो मुहर बटोरने के लिये झुक गईं, पर राजकुमारी नहीं झुकी, और राजकुमार ने फ़ौरन ही उसे पहचान लिया। बस फिर क्या था वह उसके पास पहुँचा, और उसने सबके सामने राजकुमारी को पकड़ लिया। इसके बाद वह राजकुमारी के साथ राजा के पास पहुँचा। फ़ौरन ही राजा ने दोनों को आशीर्वाद दिया, और उन दोनों का विवाह हो गया।

इसके बाद उस दुष्ट संरक्षिका के लिये यह हुक्म दिया गया कि उसका सिर काट लिया जाय। फ़ौरन ही वह जल्लादों के सुपुर्द कर दी गई, और उसका सिर सिरों की मीनार में रख दिया गया।

उन दोनों का विवाह हो गया

चालीस दिन और चालीस रात तक दोनों राज्यों में खुशियाँ मनाई गईं, और राजकुमार तथा राजकुमारी सुख से रहने लगे।

सुनहली मछली

सावित्री देवी वर्मा

रूस में समुद्र के किनारे एक बूढ़ा मछेरा रहता था। वह मछलियां पकड़ कर अपनी गुजर-बसर किया करता था। समुद्र के किनारे ही एक ऊँची चट्टान पर उसकी छोटी-सी झोंपड़ी थी। बूढ़ा बड़ा ही नेक और सन्तोषी व्यक्ति था, परन्तु उसकी बुढ़िया बड़ी लोभी और चिड़चिड़े मिज़ाज की थी। दुनिया में कई लोगों का स्वभाव ही ऐसा होता है कि वे अपनी वर्तमान दशा से सन्तुष्ट नहीं रहते। उनके जीवन में हाय ! हाय ! मची रहती है। इस बुढ़िया का स्वभाव भी ऐसा ही था। बेचारा बूढ़ा मछेरा दिन भर आँधी-तूफ़ान में समुद्र के किनारे मछलियां पकड़ता और शाम को जब मछलियों से भरी हुई टोकरी लेकर घर लौटता, तो वह बुढ़िया उसका बोझा उतारने तथा जाल सुखाने में मदद न करके, उल्टी उसे जली-कटी सुनाती—"ओ हो ! आ गये दिन भर मटरगश्ती करके, मैं तो घर का काम करते-करते थक गई, और एक तुम हो कि सारा दिन समुद्र के किनारे बैठे बांसुरी बजाते रहते हो। बस दिन भर में इतनी ही मछलियां पकड़ी हैं ? दीखता है तुम्हें जाल डालना ही नहीं आता।"

बेचारा बूढ़ा अपनी बुढ़िया की किटकिट का आदी हो गया था। वह उसकी बात को अनसुनी कर, खाना खाकर भगवान को धन्यवाद देता और सो रहता। एक दिन की बात है कि उसने समुद्र में मछली पकड़ने को जाल डाला, पर कोई भी मछली जाल में नहीं आई। निराश होकर जब वह जाल समेटने लगा, तो उसे वह कुछ भारी प्रतीत हुआ, पर मछली तो उसमें कोई दीखती न थी। पूरा जाल खींचने के बाद, उसने जब उसे खोला, तो उसमें एक प्यारी-सी, सुन्दर-सी सुनहली मछली निकली। बूढ़े मछेरे ने उसे हाथ में उठा लिया और उसकी पीठ पर हाथ फेरने लगा। थोड़ी देर बाद वह सुनहली मछली सचेत होकर बोली, "बूढ़े बाबा ! तुम मुझे छोड़ दो, मैं समुद्र की राजकुमारी हूँ। अगर तुम दया करके मुझे छोड़ दोगे, तो तुम मुझ से जो माँगा करोगे, तुम्हें दिया करूंगी, तुम्हारी सब ग़रीबी दूर कर दूंगी।" बूढ़े मछेरे को नन्ही सुनहली मछली पर दया आ गई और उसने उसे समुद्र में छोड़ दिया। सुनहली मछली लहरों पर किलोलें करती हुई अपने राजभवन में वापिस आ गई। वहाँ उसकी सखियां और दासियां घबड़ाई हुई सी उसकी बाट जोह रही थीं। राजकुमारी के सकुशल वापिस लौट आने पर राजमहल में खूब धूम-धाम से उत्सव मनाया गया—सब सखियों ने मिल कर खूब गीत गाये। वे झूमर बना कर अठखेलियां करती हुई खूब नाचीं।

इधर शाम को जब बूढ़ा मछेरा खाली हाथ घर पहुँचा, तो उसकी बुढ़िया ने उसे बहुत बुरा-भला कहा। जब उसके गुस्से का उबाल निकल गया, तो बूढ़े ने उसे सुनहली मछली की बात बताई। बुढ़िया उस समय एक लकड़ी की टूटी नांद में कपड़े धो रही थी,

उसने चिढ़कर कहा—"ऊँहूँ, यह तो सब झूठी बातें हैं, मैं तो तब जानूँ जब तुम लकड़ी की एक नई नाँद ही माँग कर ला दो।"

उसने चिढ़कर कहा—"उहूँ, यह तो सब झूठी बातें हैं, मैं तो तब जानूं जब तुम लकड़ी की एक नई नांद ही मांग कर ला दो।"

बस दूसरे दिन बूढ़े ने समुद्र के किनारे जाकर पुकारा—"हे सुनहली मछली, तुम कहाँ हो, ज़रा मेरी प्रार्थना सुनने की कृपा करो।" बूढ़े का इतना कहना था कि दयालु सुनहली मछली लहरों पर चढ़ कर अठखेलियां करती हुई, तुरन्त वहाँ आ पहुँची। उसे देख कर बूढ़े ने तीन बार धरती छू कर, उसका अभिवादन किया और बोला—"हे समुद्र की राजकुमारी! मेरी बुढ़िया को एक लकड़ी की बढ़िया नांद चाहिये।"

"उसकी इच्छा पूर्ण होगी।" ऐसा कह कर सुनहली मछली फिर अन्तर्ध्यान हो गई। घर आकर बूढ़े ने देखा कि पुरानी नांद की जगह शीशम की लकड़ी की एक बढ़िया नांद रखी हुई है। बूढ़े ने सुनहली मछली को बार-बार धन्यवाद दिया। पर वह असन्तोषी बुढ़िया इससे खुश नहीं हुई। वह उपेक्षा की दृष्टि से बोली—"लकड़ी की नांद कौन बड़ी चीज़ है जिसके लिये तुम दस बार धन्यवाद दे रहे हो। कल तुम जाकर उससे कहना कि इस झोंपड़ी के बदले हमें एक बढ़िया मकान चाहिए।"

दूसरे दिन सुबह अन्धेरे ही उसने बूढ़े को बिना कुछ खिलाये-पिलाये समुद्र के किनारे भेज दिया। बेचारे बूढ़े मछेरे ने वहाँ आकर फिर पुकारा—"हे समुद्र की राजकुमारी! तुम कहाँ हो? मेरी प्रार्थना सुनो।"

समुद्र पर लहरें उठीं और उन पर बल खाती हुई सुनहली मछली भी आन पहुँची। बूढ़े ने अपनी टोपी से तीन बार धरती को छू कर नमस्कार किया और बोला—"ए मेरी सुनहली मछली! मेरी बुढ़िया को इस झोंपड़ी में रहने में बड़ा कष्ट होता है, उसे एक अच्छा पक्का घर चाहिये।"

"उसकी इच्छा पूरी होगी।" यह कह कर सुनहली मछली फिर ग़ायब हो गई। घर आकर बूढ़े ने देखा कि टूटी-फूटी झोंपड़ी के बदले एक बढ़िया मकान खड़ा है। उसमें खाने-पीने और रहने के सभी सुख-साधन हैं। आंगन में गाय बंधी है। घर के आस-पास मुर्गियाँ दाना चुग रही हैं। चारों ओर अनाज के खेत लहलहा रहे हैं। यह सब देख कर बूढ़ा बुढ़िया से बोला, "अब तो हम एक अच्छे खाते-पीते किसान के सदृश सुख से रहेंगे। भला अब हमें किस बात की कमी है।"

खैर बूढ़े के कुछ दिन तो चैन से कटे, पर वह असन्तोषी बुढ़िया अपनी वर्तमान दशा से कभी भी प्रसन्न नहीं होने वाली थी। उसे यही पछतावा था कि इस झोंपड़ी के बदले एक बड़ी हवेली क्यों नहीं मांग ली। वह सोचने लगी कि एक किसान की औरत की तरह मुझे अपना सब काम खुद ही करना पड़ता है। खेतों की देखभाल, गाय की सेवा, घर का धंधा यह सब क्या थोड़ा काम है। किसानों से तो रईस अच्छे, जिन्हें कुछ मेहनत तो नहीं करनी पड़ती। सो उसने एक दिन अपने बूढ़े से फिर कहा—"मैं मेहनत-मजदूरी की इस जिन्दगी से तंग आ गई हूँ। अब मैं भी रईसों की स्त्रियों की तरह शान-शौकत से रहना चाहती हूँ। सो तुम जाकर सुनहली मछली से कहो कि मुझे हवेली, नौकर-चाकर तथा सुख-सम्पत्ति सब से भरपूर कर दे।"

यह सुन कर बेचारा बूढ़ा मछेरा फिर समुद्र के किनारे आया और हिचकिचाते

थोड़ी देर बाद भयंकर गड़गड़ाहट हुई और काली-काली गरजती हुई लहरों पर चढ़कर सनहली मछली आ पहुँची

हुए उसने फिर समुद्र की राजकुमारी को पुकारा। इस बार समुद्र में अधिक ऊँची लहरें उठीं और सुनहली मछली उन पर चढ़ कर आई। बूढ़े ने धरती पर तीन बार झुक कर फिर सलाम किया और बोला—"हे मेरी दयालु राजकुमारी! मेरी बुढ़िया अब रईसों की तरह सुख और आराम की जिन्दगी बसर करना चाहती है।"

"उसकी इच्छा पूर्ण होगी"—कह कर सुनहली मछली फिर लोप हो गई।

घर लौट कर बूढ़े ने देखा कि उसके मकान के स्थान पर एक आलीशान बड़ी सी हवेली खड़ी है। उसके कमरे खूब सजे हुए हैं। आठ-दस, दास-दासियां बुढ़िया की सेवा में हाजिर हैं। कोई उसके बाल संवार रही है, कोई शीशा लिये खड़ी है। एक दासी नई पोशाक पकड़े हुए है। दूसरी नये जोड़े जूते पकड़े खड़ी है। मेज पर तरह-तरह के भोजन प्लेटों में सजे हुए हैं। तिजोरियों में धन-दौलत और आभूषण भरे हुए हैं। यह सब देख कर बूढ़े ने सुनहली मछली को मन ही मन बार-बार धन्यवाद दिया।

पर इतनी धन-दौलत पाकर बुढ़िया के मिजाज सातवें आसमान पर चढ़ गये वह जरा-जरा सी बात पर अपने बूढ़े को जली-कटी सुनाने लगी; यथा—इस घर में यह कसर है, यह कमी है, यह चीज नहीं है, वह चीज नहीं है। तुम्हारी सुनहली मछली को इस बात का ध्यान ही नहीं रहा, वह फलानी चीज देनी भूल गई। बेचारा बूढ़ा चुपचाप अपनी बुढ़िया की बकवास सुनता रहता। उसे उसकी मूर्खता पर तरस भी आता, पर वह कुछ कह कर लड़ाई अधिक बढ़ाना नहीं चाहता था।

एक दिन बुढ़िया को बाहर घूमने का शौक चर्राया। उसने अपने नेक पति को घोड़ा-गाड़ी जोत कर लाने का हुक्म दिया। बेचारे बूढ़े ने गाड़ी जोत कर दरवाजे के सामने लाकर खड़ी कर दी। उस दुष्ट बुढ़िया के गाड़ी में बैठते ही घोड़े बहुत उछलने लगे, पर नेक बूढ़े के रास संभालने पर वे शान्त हो कर खड़े हो गये। बुढ़िया के हुक्म देने पर बूढ़े ने गाड़ी हांक दी। कई मीलों की सैर करके जब बुढ़िया लौटी, तो घर आकर वह बूढ़े पर और भी बिगड़ी "मैं गाड़ी में घूमना पसन्द नहीं करती क्योंकि सड़कों पर धूल उड़ती है। फिर जिस प्रकार लोग रानी को झुक-झुक कर सलाम करते हैं, उस प्रकार लोग मेरे सम्मान के लिये नहीं झुके। मैं ऐसा अपमानजनक जीवन पसन्द नहीं करती। तुम कल ही जाकर अपनी सुनहली मछली से कहना कि वह मुझे एक महारानी बना दे।"

बेचारा बूढ़ा अपनी बूढ़ी के दुराग्रह से तंग आ गया था, वह सुनहली मछली को परेशान नहीं करना चाहता था, पर न जाने में भी बूढ़े की खैर नहीं थी। उसे मालूम था कि बिना वरदान मांगे लौटने पर बुढ़िया उसे घर में न घुसने देगी। उसने आगा-पीछा सोच कर फिर पुकारा—"हे मेरी सुनहली राजकुमारी! कृपया मेरी प्रार्थना सुनो।" इस बार समुद्र में बहुत ऊँची-ऊँची लहरें उठीं और अन्त में एक ऊँची लहर पर चढ़ कर सुनहली मछली आई और उसने पूछा—

"अब तुम्हारी बुढ़िया को और क्या चाहिये?" बूढ़े ने डरते-डरते अपनी लोभिन बुढ़िया की इच्छा बता दी। "अच्छा, जाओ बुढ़िया की यह इच्छा भी पूरी होगी।" यह कह कर सुनहली मछली फिर ओझल हो गई।

घर लौट कर बूढ़े ने देखा कि हवेली के स्थान पर एक महल खड़ा है। उसके चारों ओर ऊँचा परकोटा है। परकोटे से लग कर गहरी खाई खुदी हुई है। उस दुर्ग में महल के सबसे सुन्दर भाग में बुढ़िया दास-दासियों से घिरी हुई बैठी है। सिर पर वह मुकुट पहने हुए है। राजसी पोशाक और ताज पहिन कर, वह बड़ी शान से सिंहासन पर बैठी हुई है। हर दरवाजे पर बरछा ताने सिपाही पहरे पर खड़े हैं। बूढ़े ने भी वहाँ जाकर अदब से बूढ़ी महारानी को झुक कर सलाम किया। अब बुढ़िया का सिर इतना फिर गया था कि अपने जिस नेक पति के कारण उसे आज महारानी बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था, उसी को अपने सामने देख कर वह बिगड़ने लगी। उसने अपने पहरेदारों को कहा—"इस भिखमंगे बूढ़े को महल में से धक्के मार कर बाहर निकाल दो।" बेचारा बूढ़ा पहरेदारों के धक्के खाकर महल के बाहर आकर थक कर गिर पड़ा। उसकी टोपी पीछे को लुढ़क गई। एक दयालु दासी ने वह टोपी उठा कर, चुपके से ला कर उसे दी। बेचारा बूढ़ा अब घोड़ों के अस्तबल में रहने लगा। उसे अपनी बूढ़ी के अभिमान पर रह-रह कर खेद होता था। जब वह सुनता कि बुढ़िया महारानी अपने दास-दासियों को ठोकरों से उड़ाती है, भूल करने पर उन्हें हंटरों से उधेड़ती है, तो उसे और भी दुख होता।

एक दिन रात को समुद्र में बड़ा तूफ़ान आया। बूढ़ी महारानी उस समय सोने जा रही थी। उसे समुद्र का गर्जन-तर्जन बिलकुल पसन्द नहीं आया। कुछ देर अपने महल की खिड़की में से वह समुद्र की उछल-कूद देखती रही। फिर उसके हृदय में विचार आया कि 'अगर मैं समुद्र की रानी बन जाऊं, तो समुद्र को भी मेरी आज्ञा माननी पड़ेगी फिर वह इस तरह मेरे आगे गरजे-तरजेगा नहीं। समुद्र की रानी बन जाने के बाद, मेरा हुक्म सुनहली मछली पर भी चलेगा, फिर भला मुझ से बढ़ कर इस दुनिया में और दूसरा कौन हो सकता है?'

बस दूसरे ही दिन बुढ़िया ने अपने सिपाहियों को हुक्म दिया कि उस बूढ़े मछेरे को हाजिर करो। उसके कहने की देर थी कि जल्लाद-से सिपाहियों ने बेचारे बूढ़े को नंगे पांव और नंगे सिर घसीटते हुए, वहाँ ला कर खड़ा कर दिया। वह नेक बूढ़ा अपने अस्तबल में ही खुश था, क्योंकि उसे वहाँ चैन से तो रहना मिलता था। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि अब बूढ़ी महारानी को किस बात की और कमी रह गई है, कौनसी न्यामत दुनिया की थी, जो उसकी पहुँच से बाहर थी! वह आश्चर्य कर रहा था कि अब महारानी बन कर भी इसकी कौनसी इच्छा पूरी होनी बाकी रह गई है!

बूढ़ी महारानी ने बूढ़े को झकझोरते हुए कहा—"तुम इसी समय समुद्र तट पर जाओ और सुनहली मछली को हुक्म दो कि मेरी महारानी, समुद्र पर भी शासन करना चाहती है, और उसकी इच्छा है कि तुम भी अपनी सखी-सहेलियों सहित उसकी सेवा में हाजिर हो।" बूढ़े को आश्चर्य से अपनी ओर ताकते देख बुढ़िया महारानी ने डपट कर कहा—"देख क्या रहे हो? जाओ, जाओ, इसी समय जाओ। मेरा हुक्म है, तुम्हें जाना ही होगा।"

बेचारा बूढ़ा दुखी और खिन्न-मन से समुद्र के किनारे आया। इस समय आकाश में बादल छाये हुए थे, बिजली कड़क रही थी। बूढ़े ने डरते-डरते जैसे ही सुनहली मछली

को पुकारा, समुद्र में भारी तूफ़ान उठ खड़ा हुआ। लहरों ने समुद्र तल पर उथल-पुथल मचा दी। मूसलाधार पानी बरसने लगा। बूढ़ा इस आँधी-तूफ़ान में भीगता हुआ खड़ा था। थोड़ी देर बाद भयंकर गड़गड़ाहट हुई और काली-काली गरजती हुई लहरों पर चढ़ कर सुनहली मछली आ पहुँची। उसने एक राजकुमारी के सदृश शान से पूछा—"बूढ़े बाबा! अब महारानी बनने के पश्चात् भी क्या तुम्हारी बूढ़ी की कुछ साध बाकी रह गई है?"

बूढ़े ने धरती पर तीन बार झुक कर सलाम करके, डरते हुए अपनी बुढ़िया की अभिमान-भरी इच्छा सुना दी। यह सुन कर समुद्र ने मानो क्रोध भरी हुंकार ध्वनि की। लहरें गरजने लगीं और सुनहली राजकुमारी सिंहासन सहित लोप हो गई।

कुछ जवाब न पाकर बूढ़ा जब चुपचाप महलों की ओर वापस आया तो वहाँ का परिवर्तन देख कर वह हैरान रह गया। न अब वहाँ महल था, न दास-दासियां; उनके स्थान पर थी वही पुरानी झोंपड़ी और वही टूटी नांद। असन्तोषी बुढ़िया उसी टूटी नांद में बैठी कपड़ों में साबुन लगा रही थी। यह देख कर बूढ़ा मछेरा एक दार्शनिक के सदृश बोला—"असन्तोषी मनुष्य संसार में कभी भी सुखी नहीं रह सकता, अभिमानी का सिर नीचा होकर ही रहता है।"
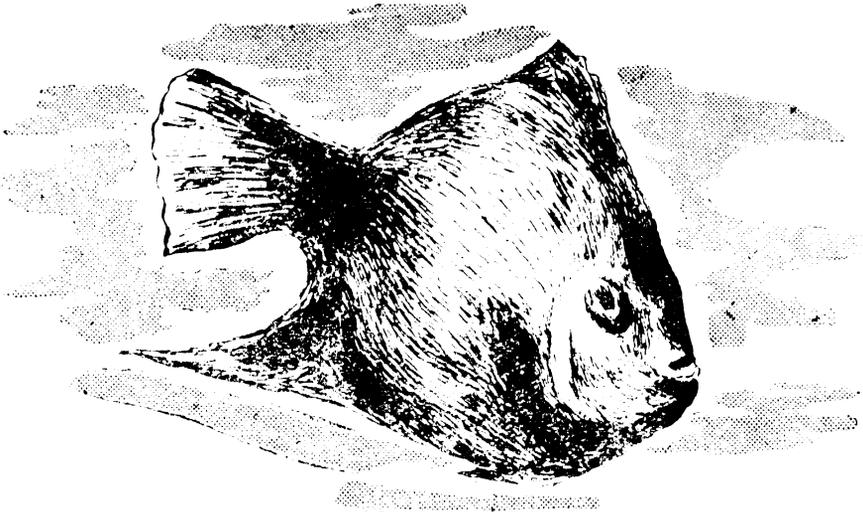
आज्ञाकारी पुत्र

अवनीन्द्र

अंजु नामक एक गांव में किम नामक एक व्यक्ति रहता था। जब से उसको होश आया था और वह दुनिया को समझने-बूझने लगा था, तब से कभी उसने पैसा कमाने का कोई काम नहीं किया। उसका दिन इधर-उधर घूमने, गप्प लड़ाने या खेल-कूद में गुज़रता। एक समय ऐसा आया जब उसके पास एक दमड़ी भी नहीं रही। उस समय उसने गांव से दूर रहने वाले अपने एक रिश्तेदार के पास जाने का विचार किया। उसका वह रिश्तेदार बहुत धनी था। उससे दो-चार हज़ार मांगना सरल था। किम बग़ैर किसी संकोच के उसके पास चला गया, और बिना किसी लज्जा व हिचकिचाहट के उसने अपने धनी रिश्तेदार से दो हज़ार रुपये मांगे। धनी रिश्तेदार पर किम के ज़ोर से मांगने का प्रभाव पड़ा। किम की हालत देख कर उसको दया आई और उसने उसके प्रति सहानुभूति दिखाई। कारण कुछ भी हो, उस धनी ने २,००० रुपये किम को तुरन्त दे दिये। किम रुपये पाकर प्रसन्न मन से अपने गाँव के लिए रवाना हो गया।

रास्ते में एक नदी आती थी। उसे तो पार करना ज़रूरी था। अतः किम नाव की प्रतीक्षा में नदी के किनारे बैठ गया। वहाँ उसने अपने सामने एक विचित्र दृश्य देखा। एक तरुण पुरुष नदी के किनारे पड़ी शिला के ऊपर खड़ा होकर नदी में छलांग मारने का प्रयत्न कर रहा था, और पास खड़ी एक तरुणी उसका कोट पकड़ कर पीछे खींच रही थी। बाद में वह युवती पानी में कूदने लगी, और वह युवक उसका हाथ पकड़ कर उसे रोकने लगा। यह दृश्य देख कर किम को बड़ा विस्मय हुआ। वे लोग ऐसा क्यों कर रहे हैं, उसने इसकी छानबीन की। जांच करने पर मालूम हुआ कि वह युवा जहां काम करता था, वहाँ हिसाब में कुछ गड़बड़ी पड़ गई थी और २,००० रुपये की कमी पड़ती थी। यदि तुरन्त २,००० रुपये जमा न किये गये तो युवा के पास आत्महत्या करने के सिवाय और कोई दूसरा चारा नहीं। अतः वह युवक डूबने जा रहा था और उसकी पत्नी उसे ऐसा करने से रोक रही थी। पत्नी यह डर भी दिखा रही थी कि यदि उसकी बात न मानी गई, तो वह नदी में उससे पहले कूद कर प्राण दे देगी।

युवा दम्पती का यह संकट देख कर किम का हृदय द्रवित हो गया और वह अपना दुःख भूल गया। उसने अपने पास के २,००० रुपये उनको दे दिये और खुद खाली हाथ अपने गाँव को चल दिया। उस युगल ने उसका नाम और गाँव पूछा परन्तु उसने उनको अपना पता इतना ही बताया कि अंजु का किम। इसके सिवाय उसने और कुछ नहीं बताया।

किम खाली हाथ घर लौटा, अतः उसकी ग़रीबी पहले के समान ही बनी रही। इसके कुछ दिनों बाद वह एक बौद्ध भिक्षु के पास आने-जाने लगा। इससे पड़ोसियों को शंका होने लगी कि वह बौद्ध हो जायगा। परन्तु उसने अपना धर्म नहीं बदला। हाँ, उस भिक्षु को उसने अपना गुरु बना लिया।

कुछ वर्ष और इसी तरह गुजर गये। किम को मालूम होने लगा कि उसका अन्त काल समीप आ गया है। तब उसने अपने पुत्र को बुलाया और उसको बताया कि उसके मरने पर उसकी अन्त्येष्टि क्रिया कैसे करनी है। उस भिक्षु से मिलने और उसके आदेश के सिवाय उसके शरीर का कुछ न किया जाय। पुत्र को यह कठोर आदेश देकर किम ने अपने प्राण त्याग दिए।

लड़का अत्यन्त आज्ञाकारी था। फिर पिता की अन्तिम समय को इच्छा थी! इसलिए पिता की इच्छानुसार कार्य करने का यदि उसने संकल्प किया, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं। पिता के मरने से उसको बहुत दुःख हुआ। फिर भी शोक को रोक कर उसने अपने पिता किम के शरीर को एक कपड़े में लपेटा, उसकी गठरी बना कर कंधे पर रख ली और बौद्ध भिक्षु की खोज में यांगगेन पहाड़ी के शिखर की ओर चल दिया। बहुत ऊंचे चढ़ने पर उसको भिक्षु की कुटिया दिखाई दी। वह भार लादे हुए बड़ी मुश्किल से वहाँ पहुँचा। भिक्षु समाधि लगाकर बैठा हुआ था। ध्यान भंग होने पर भिक्षु ने लड़के को देखा और लड़के को सम्बोधन करके कहा—"इस घाटी में जो ऊँचा हवेला दिखाई देती है, उसको गिराकर उसके पीछे जो सपाट ज़मीन है, वहाँ तेरे पिता को मिट्टी देनी चाहिए।"

भिक्षु की इस बात से लड़का घबड़ा गया। उसने अपने कंधे का बोझ नीचे रख दिया और माथे का पसीना पोंछने लगा। भिक्षु की बात सुन कर उसको ठेस पहुँची। पिता की मृत देह को इतनी दूर से ढोकर यहाँ तक लाया और अभी तक उसका अन्तिम संस्कार कहाँ होगा, यह भी पता नहीं। वह जो ऊंची इमारत दीखती है, उसको गिराने के बाद जो सपाट ज़मीन तैयार होगी, वहाँ उसको समाधि दी जायगी। इसका अर्थ है कि पहले उस इमारत को खरीदा जाय, फिर उसको गिराया जाय। यह सब खटराग और उखाड़-पछाड़ किस लिए! यह वह अपने मन में सोचने लगा। भिक्षु उससे हंसी-ठट्ठा तो नहीं कर रहा; यह शंका भी उसके मन में उत्पन्न हुई। भिक्षु के चेहरे की ओर जब उसने देखा तो उसको ऐसा कोई चिन्ह दिखाई नहीं दिया।

भिक्षु अपनी समाधि से उठ खड़ा हुआ। उसने इशारे से कहा कि मृत देह को यहाँ छोड़ कर वह उसके पीछे-पीछे आवे। धीरे-धीरे अब अंधकार बढ़ रहा था। जब वे दोनों उस खास हवेली के समीप पहुँचे तो काफ़ी अंधेरा हो चुका था।

हवेली के चारों ओर की दीवार बहुत ऊंची नहीं थी। भिक्षु ने उस लड़के को कहा कि उसकी पीठ पर चढ़ जाए और देखे कि परली तरफ क्या है? भिक्षु की इस बात से लड़के को अचरज नहीं हुआ क्योंकि कोरिया में यह माना जाता है कि दीवार के पीछे को देखने पर कुछ अनिष्ट होता है। लड़के को इसका शीघ्र अनुभव हुआ। भिक्षु की पीठ पर चढ़ कर जब उसने दीवार की परली ओर देखने की कोशिश की, तो भिक्षु ने उसको इतने ज़ोर का धक्का दिया कि वह दूसरी ओर झाड़ियों में जा गिरा। वह सिर के बल गिरा। सिर नीचे और पैर ऊपर, यह उसकी अवस्था थी। इस हालत में उसको कोई भी चोर समझ सकता था और मनचाहा मार सकता था।

वहाँ पड़े-पड़े उसने उस घर की ओर देखा। उसको दिखाई दिया कि उस दरवाजे से एक स्त्री आ रही है। वह आगे आई, और पीछे के बंधे चबूतरे पर आकर बैठ गई।

वहाँ उसने अपने सामने एक विचित्र दृश्य देखा। एक तरुण पुरुष नदी के किनारे पड़ी शिला के ऊपर खड़ा होकर नदी में छलांग मारने का प्रयत्न कर रहा था, और पास खड़ी एक तरुणी उसका कोट पकड़ कर पीछे खींच रही थी।

उस समाधि के सामने उसने हाथ जोड़े और प्रार्थना करने लगी। धीरे-धीरे उसकी प्रार्थना का स्वर ऊंचा होने लगा। वह स्त्री कह रही थी—

"हे भगवान्! जिस देवता-तुल्य मानव ने मेरा और मेरे पति का कल्याण किया है, उसके दर्शन करादे। उस आदमी का नाम किम है।"

यह सुन कर वह तरुण लड़का झटपट अपने कपड़े झाड़ कर उठ बैठा। उसने अपने बाप के सम्बन्ध में यह बात सुन रखी थी। आसपास यद्यपि अन्धकार था, परन्तु उसके सिर पर प्रकाश पड़ रहा था। उसको उठने की कोशिश करते देख कर घर के नौकरों ने उसको झपट कर पकड़ लिया, और उसको घर के मालिक के सामने ले गये।

"क्या है? तू कौन है? यहाँ क्या करता था?"

"मैं अंजु का किम हूं। अपने मृत पिता की अन्त्येष्टि करने के लिए यांग-गेन आया था।"

ध्यान भंग होने पर भिक्षु ने लड़के को देखा और लड़के को सम्बोधन करके कहा, "इस घाटी में जो ऊंची हवेली दिखाई देती है, उसके पीछे जो सपाट जमीन है, वहां तेरे पिता को मिट्टी देनी चाहिये।"

"क्या कहा ? अंजु का किम ? जिसने हमारा उद्धार किया और दूसरा जन्म दिया ? ओह ! तू किम के समान तो दीखता है ! तू उसका लड़का तो नहीं है ?"

"हां, हां मैं उसका लड़का हूँ।"

"भगवान् ! तुझे कोटिशः धन्यवाद है। इतने दिनों से जिसे खोज रहे थे, वह आखिरकार आज मिल ही गया। तरुण ! तू हमारे लिए हमारे पुत्र के समान है। तेरे पिता की कृपा से हमको बराबर समृद्धि प्राप्त होती गई और यह वैभव उसी की कृपा का फल है। अपनी सम्पत्ति का आधा भाग हमने तेरे लिए पहले से अलग कर रखा है।"

कृतज्ञता से उसका हृदय भर गया और गला रुंध गया। अपने पिता के पुण्य से आज उसके सब कष्टों का अन्त हो गया।

समुद्र का खारी पानी

टोमोजी मूतो

पुराने जमाने की बात है, एक गाँव में दो भाई रहते थे। बड़ा भाई तो धनी था पर छोटा भाई था कंगाल। एक वर्ष नये साल के दिन जब कि सारा नगर उत्सव की तैयारी कर रहा था, उस छोटे भाई के घर खाने को चावल भी न थे। वह अपने बड़े भाई से एक सेर चावल उधार मांगने के लिए गया, परन्तु उसने उसे टका सा जवाब देकर लौटा दिया। जब वह निराश होकर लौट रहा था, तो उसे मार्ग में लकड़ी का भारी गट्ठा लिये हुए एक बूढ़ा मिला। बूढ़े ने उससे पूछा—"तुम कहाँ जा रहे हो? मालूम होता है तुम किसी मुसीबत में पड़े हुए हो।"

छोटे भाई ने उसे अपनी मुसीबत की सारी कहानी सुना दी। बूढ़े ने उसे धीरज देते हुए कहा—"अगर तुम लकड़ी के इस गट्ठे को मेरे घर तक पहुँचा दो, तो मैं तुम्हें एक ऐसी अद्‌भुत चीज़ दूंगा कि जिसकी मदद से तुम मालामाल हो जाओगे।"

छोटा भाई बड़ा दयालु स्वभाव का था, उसने लकड़ी का गट्ठा सिर पर धर लिया और बूढ़े के पीछे-पीछे चल दिया।

घर पहुँच कर बूढ़े ने उसे एक मालपुआ दिया और कहा—"इसको लेकर तुम मंदिर के पीछे जो जंगल है, वहाँ जाओ। वहाँ पर एक बिल है, जिसमें बहुत से बौने रहते हैं।

वह बोला—"कृपा करके यह मालपुआ मुझे दे दीजिये। इसके बदले में मैं आपको बहुत से जवाहरात दूंगा।"

उन बौनों को ये मालपुए बहुत पसन्द हैं। वे किसी भी कीमत पर इसे प्राप्त करना चाहेंगे। उस समय इसके बदले में तुम धन-दौलत न मांग कर पत्थर की एक चक्की मांग लेना। बाद में तुम्हें इस चक्की की करामातें मालूम हो जायेंगी।"

बूढ़े से विदा हो कर, छोटा भाई उस वन में आया। मंदिर से कुछ दूरी पर एक बिल में से उसे बहुत से बौने निकलते और अन्दर जाते नजर आये। वे एक वृक्ष को खींच कर अपने बिल तक ले जाने की चेष्टा कर रहे थे। यह उनके लिये बहुत मुश्किल काम था।

छोटे भाई ने कहा—"अच्छा मैं तुम्हारे लिये यह वृक्ष बिल तक ले चलता हूँ।" बिल के पास आकर, उसको एक महीन सी आवाज़ सुनाई दी, "मुझे बचाइये, मैं मर जाऊंगा"। यह सुन कर छोटे भाई ने घबड़ा कर चारों ओर देखा। उसके पांव की अंगुलियों के बीच में एक नन्हा सा बौना पिचा जा रहा था। उसने उस बौने को झट से उठा लिया। असल में यह बौनों का राजकुमार था।

बौनों के राजकुमार की नज़र जब मालपुए पर गई, तो वह बोला—"कृपा करके यह मालपुआ मुझे दे दीजिये। इसके बदले में मैं आपको बहुत से जवाहरात दूंगा।" लेकिन छोटे भाई को बूढ़े की बात याद थी, उसने मालपुए के बदले में पत्थर की चक्की मांगी। आखिरकार बौने-राजकुमार की इच्छा को पूरा करने के लिये, बौने-राजा ने चक्की देना मंजूर कर ली। जब चक्की लेकर छोटा भाई चलने लगा, तो बौने-राजा ने कहा—"देखो भाई यह हमारे राज्य की सबसे बहुमूल्य चीज़ है। इसका इस्तेमाल सोच-समझ कर करना। तुम इस चक्की को दाहिनी तरफ़ से चक्कर देकर जो चीज़ मांगोगे, वह इसमें से निकलनी शुरू हो जायेगी। और जब तक इसे बाईं तरफ़ चक्कर नहीं दोगे, तब तक चीज़ निकलती ही जायेगी।"

छोटा भाई पत्थर की चक्की लेकर घर आया। उसकी बीवी अपने पति के इन्तज़ार में भूखी-प्यासी बैठी हुई थी। पति को खाली हाथ आते देख कर वह बड़ी निराश हुई, पर छोटे भाई ने आते ही कहा—"जल्दी से फ़र्श पर चटाई फैलाओ ?"

चटाई पर चक्की रख कर छोटे भाई ने उसे दाहिनी तरफ़ घुमा कर कहा—"चावल निकलो।" बस इतना कहना था कि चावलों के ढेर लग गये। फिर वह बोला—"मछली निकलो", तो मछली निकलनी शुरू हो गई। इस प्रकार उसको जिन-जिन चीजों की ज़रूरत थी, वह सब उसने चक्की से प्राप्त कर लीं।

फिर उसको ख़याल आया कि अब तो मैं अमीर आदमी हूँ, मुझे तो आलीशान मकान में रहना चाहिये। अतएव उसने चक्की को घुमाकर नया मकान, घुड़साल, गोदाम, मतलब यह कि शान-शौकत की सब चीज़ें मांग लीं, फिर उसने अपने सभी अड़ोस-पड़ोस के लोगों को दावत दी। इस प्रकार उसने नये वर्ष का त्यौहार खूब धूमधाम से मनाया।

यह देख कर बड़ा भाई सोचने लगा कि मेरा छोटा भाई एक रात में लखपती कैसे बन गया ? इसमें ज़रूर कुछ भेद है। वह छिप कर दरवाज़े के पीछे खड़ा हो गया। उसने देखा कि छोटा भाई एक चक्की को घुमा कर मिठाई के टोकरों के टोकरे भर रहा है और उन्हें मेहमानों को दे रहा है। बड़े भाई ने निश्चय किया कि मैं किसी न किसी तरह इस चक्की को ज़रूर प्राप्त करूंगा।

रात को जब सब सो रहे थे, वह अपने भाई के घर पिछवाड़े से घुसा और चक्की उठा लाया। चक्की को लेकर वह एक नाव पर सवार हो गया कि इसे ले जाकर किसी एकान्त टापू में जाकर मैं लखपती हो जाऊंगा। होनहार ऐसी हुई कि अपनी नाव पर जरूरत की और सब चीजें तो वह ले आया था, पर नमक लाना भूल गया था। उसने चक्की चला कर कहा—"नमक निकलो, नमक निकलो।"

कहने की देर थी कि चक्की में से ढेरों नमक निकलना शुरू हो गया। बड़े भाई को चक्की को रोकने का तरीका मालूम नहीं था। नतीजा यह हुआ कि नमक के बोझ से बड़ा भाई नाव समेत समुद्र में डूब गया।

लोगों का कहना है कि तब से वह चक्की समुद्र में बराबर चल रही है और उसके नमक से समुद्र का सारा जल खारी हो रहा है।

नतीजा यह हुआ कि नमक के बोझ से बड़ा भाई नाव समेत समुद्र में डूब गया

"मैं सब जानवरों और पक्षियों को—चाहे वे चौपाये हों या दो पैरवाले, नीची श्रेणी के हों या उच्च श्रेणी के, छोटे हों या बड़े—आज्ञा देता हूँ कि भविष्य में वे सभी मुर्गी जैसे ही अंडे दें"

एक जर्मन कथा

मुर्गी के अंडे

महादेव करमारकर

एक बार ऐसा हुआ कि सभी जानवरों ने गधे को अपना राजा बनाया। गधे के मंत्रि-मंडल में बन्दर हुआ प्रधान मंत्री और बैल बन गया युद्ध-मंत्री, जिससे उसके सभी नातेदार उसके समर्थक बन कर बड़े-बड़े पदों पर विराजमान हुए। मुर्गा गधे महाराज का निजी सचिव बन गया और सभी मुर्गे—जो उसकी बिरादरी में थे—विभिन्न कार्यालयों के बड़े-बड़े अफ़सर बना दिये गए। गधे को मुर्गियाँ बहुत पसन्द थीं क्योंकि वे बड़े सुन्दर गोल-गोल अंडे देती थीं, बहुत लुभावने, बहुत छोटे भी नहीं जो दिखाई ही न दें और बहुत बड़े भी नहीं जिन्हें देखने की इच्छा ही न हो। सबसे बड़ी बात यह थी कि उनसे जो छोटी-छोटी मुर्गियाँ बाहर आती थीं वे होती थीं बहुत प्यारी और नर्म-नर्म। जब गधे महाराज ने देखा कि अब वे सब से शक्तिशाली और अधिकारी सम्राट् बन गये तब उन्होंने सोचा कि राज्य भर में एकता और सादृश्य लाया जाय जिससे सभी के एक से विचार, भाषा और रहन-सहन हो जाय।

यह सोच कर महाराज ने एक बड़ा दरबार किया। उसमें सब जानवरों और पक्षियों को बुलाया गया। दरबार में बड़े ठाठ से गधे महाशय विराजमान हुए। बैल जी, बन्दर महाशय

और मुर्गा साहब अपनी-अपनी जगह बैठे। दरबार का कामकाज शुरू हुआ और महाराजा ने राज्य भर के निवासियों में एकता और सादृश्य बनाये रखने पर जोर देकर अपनी बातें कहीं। सभी जानवरों ने राजा की बातें सुनीं और जोर से उनकी हाँ में हाँ मिला कर हर्ष-ध्वनियों से अपनी पसंदगी भी जाहिर की। तब गर्दभराज ने सारी जनता का अभिनन्दन किया और कहा—"भाइयो, आपके समर्थन पर मुझे बड़ा गर्व है। मुझे विश्वास है कि आप अपने बर्ताव से अपने आचार-विचार में एकता का भाव लाएँगे। साथ-साथ मैं इस निर्णय पर भी पहुँचा हूँ कि नई पीढ़ी का नव-निर्माण अनोखे ढंग से किया जाय। मैं यह चाहूँगा कि हमारी अगली पीढ़ी एक-जैसे आचार-विचार की हो जिससे देश में कभी भी झगड़ा-फ़िसाद न हो और सब सुख-चैन से हिल-मिल कर रहें। आपको मेरी सभी बातें पसन्द हैं इसलिए मैं बहुत खुश हूँ। सभी जानवरों को चाहिए कि आगे चल कर एक जैसी सन्तान पैदा करें। भला मुर्गे जैसी भोली, प्यारी और नेक जाति अन्य कौनसी है? हमारी अगली पीढ़ी उसके जैसी ही हो जाय तो एकता और सादृश्य का पूर्णरूप से बोलबाला हो सकेगा। इसलिए महाराज की हैसियत से मैं सब जानवरों और पक्षियों को—चाहे वे चौपाये हों या दो पैरवाले, नीची श्रेणी के हों या उच्च श्रेणी के, छोटे हों या बड़े—आज्ञा देता हूँ कि भविष्य में सभी मुर्गी जैसे ही अंडे दें। मुझे विश्वास है कि आप इस आज्ञा का पूर्णतः पालन करेंगे।"

राजा की यह उच्च स्वर से घोषित आज्ञा सभी ने सुनी और वहाँ एक तहलका मच गया। लेकिन चूँकि सब दिशाओं से सेनापति बैल महाशय की सेना सुसज्जित थी, उनके सींग विरोध करनेवालों को प्राणदण्ड देने के लिए तत्पर थे, इसलिए किसी को प्रकट रूप से इस आज्ञा का विरोध करने का दुस्साहस नहीं हुआ। हाँ, एक ने अपना किंचित् विरोध प्रकट करने का दुस्साहस किया और वह थी एक छोटी-सी चिड़िया! उसने अपनी छोटी-सी आवाज़ से कहा—"हे महाराज, आपकी आज्ञा का स्वागत हो! पर एक प्रार्थना है कि आप अपने सेनापति और उनके सभी भाइयों को पहले आज्ञा दीजिये कि वे आपके इस कानून का पालन करें और सबके सामने आदर्श उपस्थित करें।"

लेकिन उस बेचारी चिड़िया को पकड़ कर सामने लाया गया। उसका न्याय करने के लिए बड़े न्यायाधीश नियुक्त हुए। उन्होंने एक मन से निर्णय दिया कि बैलों की जमात को अण्डे देने की आवश्यकता से बरी किया जाता है। साथ ही इस चिड़िया को राजा की बेइज्ज़ती करने के घोर अपराध में प्राणदण्ड दिया जाय। बस उसे मार डाला गया और फिर कोई विरोधी आवाज़ न उठी।

इस घटना से महाराज सतर्क हो गये। उन्होंने अपने मंत्रिमंडल से सलाह मशविरा करके यह घोषित किया कि सभी राज्य-निवासियों को स्वराज्य प्राप्ति के दिन होनेवाले महोत्सव में शामिल होना चाहिए और भरे दरबार में हाज़िरी देनी चाहिए। वहाँ सबको कसम खानी चाहिए कि वे पूरी एकता के निर्माण में अपना पूरा-पूरा सक्रिय सहयोग देंगे और आगे चल कर मुर्गी जैसे ही अण्डे देंगे।

राज्य-प्राप्ति-दिवस महोत्सव शुरू हुआ और राजा की आज्ञा के अनुसार दरबार में सभी पहुँच गए। वहाँ शेर और बाघ आये, कुत्ते और बकरियाँ पहुँच गयीं, सूअर और

भेड़ें तथा बगुले और गरुड़ भी आ पहुँचे। सर्वाधिपति गर्दभराज भी अपने ऊँचे सिंहासन पर विराजमान हुए। राजा की दाहिनी ओर सेनापति बैल जी अपनी गर्दन झुकाये और सींग दिखाते हुए बैठे थे। उनकी आँखों में भयानक तेज था। बाँई ओर बन्दर महाशय थे जिनकी छाती पर बड़ा सुवर्ण-पदक विराजमान था। अपने हाथ में एक लम्बी सूची लेकर वे एक-एक नाम पुकारते जाते थे।

शुरू में शेर का नाम पुकारा गया। वह धीमी चाल से सिंहासन के पास पहुँचा। उसकी आवाज मानो गले से बाहर आने में डर रही थी। कुछ देर के बाद वह बोला—"हे महाराज, कृपया मुझे कुछ समय विचारने के लिए दीजिये।" राजा ने सिर हिला कर मूक सम्मति दी और शेर अपनी जगह बैठ गया। उसने अपनी बला कुछ देर के लिए टाल दी। बाद में कुत्ता सामने आया। उसने कहा—"हे दयामय महाराज, हे प्रभो, क्या मुर्गी के अंडे और क्या राजहंस के, मेरे लिए दोनों एक ही हैं। आगे चलकर मैं मुर्गी जैसे ही अंडे दूँगा। जय महाराज की!" सेनापति बैल ने अपनी अनुमति सिर हिलाकर दे दी। राजा भी इस कथन से खुश हुआ और उसने अपने लम्बे कान ठाठ से हिलाये। बाद में कोई बाधा नहीं आई। खरगोश, बकरे, भेड़, ऊँट, सभी बारी बारी से हाजिर हुए और सभी ने कुत्ते का ही उदाहरण सामने रखकर हाँ में हाँ मिलाई। सभी ने कसम खाई कि भविष्य में वे सभी मुर्गी जैसे ही अंडे देंगे।

सियार की भी बारी आई। उसने बहुत झुक कर महाराज को प्रणाम किया जिससे उसका सिर जमीन पर कुछ लग भी गया। उसने कहा—"आपकी आज्ञा पर मुझे गर्व और खुशी है क्योंकि मेरे घर में सभी घोंसले अंडे से ही भरे हैं।" उसके बाद भेड़िये ने भी यही कहा पर शायद उसे खुद समझ में नहीं आया कि उसने क्या कहा। खैर। इसके बाद पक्षियों की बारी आई। उन्होंने जरूर इसका हलका विरोध किया, क्योंकि उन्हें विश्वास था कि वे पंखों के बल उड़ सकते हैं।

"हे महाराज, आप चाहते हैं कि···" कबूतर ने कहा, "···हम मुर्गी जैसे ही अण्डे दें। खैर हम उसका पालन करने की कोशिश करेंगे।" लेकिन राजहंस को जरा गुस्सा आया। उसने कहा—"मुर्गी जैसे अंडे? क्या मतलब?···वे कोई···अंडे हैं?···अंडे तो···" इस पर बैलों ने अपनी लाल आँखों से उसकी ओर देखा और अपने सींगों को आगे करके उसकी ओर दौड़े। तब उसने एकदम क्षमा माँगी और कहा—"नहीं हम विरोध करना नहीं चाहते। पूरी कोशिश करेंगे कि मुर्गी के जैसे हमारे अंडे निकलें।"

अब गरुड़ पक्षी को बुलाया गया। बन्दर ने उसे आज्ञा सुनाई और कहा—"तुम अब मुर्गी के जैसे अण्डे देने की कसम खाओ।" गरुड़ ने एक बार सब की ओर देखा, अपने विशालकाय पंख हिलाये। यह देखकर सबके दिल में कुछ धड़कन पैदा हुई। गरुड़ ने अपनी गर्दन उठाई और सिर उन्नत किया। उसकी आँखें मानो आग उगलने लगीं। "बिलकुल नहीं, यह नहीं हो सकता," उसने अपनी तीव्र आवाज से कहा, "यह गरुड़-जाति के स्वभाव के विरुद्ध है। मुर्गी के अंडे और गरुड़-जाति देगी? असंभव। यह गरुड़-जाति का अपमान है।"

यह कहकर तिरस्कार-भरी नजरों से उसने सामने देखा, अपने विशालकाय पंखों को फैलाया और एकदम आसमान में उड़ गया। इतनी ऊँचाई पर कि उस पहाड़ जैसे शरीरवाले का कोई पीछा न कर सका। सब ने ऊपर देखा मानो एक विशाल पहाड़ ही आसमान में मंडरा रहा था। उसके पंख सूरज की धूप में चमक रहे थे। गर्दभ महाराज ने यह देखा और उनके दिल में डर पैदा हो गया।

इतने में शेर ने दहाड़ कर कहा—"गरुड़ सच कहता है। मुर्गी जैसे अंडे देना हमारे गौरव के विरुद्ध है।" यह कहकर वह गर्दभ महाराज पर झपट पड़ा और अपने तेज पंजों और दाँतों से उसे चीर कर मार डाला। बैलों की सारी सेना इसका कुछ भी विरोध न कर सकी। क्योंकि आखिर वे बैल ही तो थे। उस समय से शेर जानवरों का राजा बना।

शेर गर्दभ महाराज पर झपटा और उसने अपने
पंजों और दांतों से उसे चीर कर मार डाला

जंगल का कानून

सावित्री देवी वर्मा

एक समय की बात है कि अफ्रीका के एक जंगल में एक आदिवासी किकुयु रहता था।
एक बार वह जंगल में शिकार की खोज में घूम रहा था तो उसे दूर से एक हाथी दिखाई पड़ा। उसने सोचा कि शायद इसके पीछे-पीछे इसके दल के अन्य हाथी भी होंगे; पर उसे यह देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ कि वह हाथी अकेला ही था। किकुयु ने सोचा, 'जरूर यह हाथी किसी विपत्ति में है, चलूं, जरा पूछूं इसे क्या दुःख है ?'

हाथी के पास जाकर किकुयु ने पूछा—"राम-राम हाथी जी! तुम कुछ उदास-से प्रतीत होते हो, क्या बात है ?"

हाथी बोला—"क्या बताऊं भाई किकुयु, मैं तो बड़ी मुसीबत में हूँ। मेरी खुराक बहुत है, अपने झुंड में रह कर मैं मनचाही नहीं कर पाता, इस कारण मेरा अपने दलवालों से मनमुटाव हो गया है, इसीलिए मैं उन्हें छोड़ कर जीविका की खोज में परदेश चला आया हूँ।"

किकुयु ने कहा—"पर यह तो कोई अक्लमन्दी की बात नहीं की कि तुम अपनी बस्ती छोड़ कर यहाँ आ गये। अकेले किसके सहारे रहोगे ?"

हाथी को अब अपनी भूल समझ में आई। पर वह था बड़ा चालाक। झट से खुशामद के ढंग से बोला—"भैया, अकेला क्यों हूँ, तुम जो हो। अच्छा दादा! आज से हम तुम दोनों दोस्त हुए। मैं तुम्हारे लिए बहुत से फल तोड़ कर लाया करूंगा और इसी जंगल में तुम्हारी छत्र-छाया में पड़ा रहूँगा।"

भोला किकुयु उसकी बातों में आ गया। कुछ दिन बाद हाथी को सिंहराज ने अपने यहाँ जंगल विभाग का मंत्री नियुक्त कर दिया। अब तो हाथी की शान का कोई ठिकाना न था।

किकुयु हाथी को कभी-कभी अपने साथ नदी पर नहलाने ले जाया करता। पानी में हाथी लेट जाता और किकुयु उसकी पीठ मल देता, इससे हाथी को बड़ा सुख लगता। धीरे-धीरे हाथी आरामतलब बन गया। जिस दिन अधिक गर्मी होती और किकुयु तपन के मारे हाथी को तालाब पर लेकर न जा पाता तो हाथी उसकी झोंपड़ी के आगे धूल में लोटने लगता और अपनी सूंड में धूल भर-भर कर अपने शरीर पर उड़ाता। हाथी के इस धूलिस्नान से किकुयु को बड़ी तकलीफ होती। धूल के कण हवा में भर जाते तो उसे सांस लेने में भी कष्ट होता। उसके घुंघराले बाल धूल से पट जाते। पर जब तक वह हाथी को नदी पर नहलाने के लिए उठ खड़ा न होता तब तक हाथी धूल उड़ाता ही रहता।

इस प्रकार हाथी की धांधली दिन पर दिन बढ़ती गई, पर किकुयु मित्रता के लिहाज से चुप रह जाता था।

एक दिन की बात है कि जंगल में बड़ी आंधी आई। जब आंधी का तूफ़ान कम हुआ तो बड़े-बड़े ओले पड़ने लगे और फिर मूसलाधार वर्षा शुरू हो गई। इन सबसे परेशान होकर हाथी किकुयु के दरवाजे पर आया, और विनती करके बोला—"रक्षा करो मित्र! मैं तो इस आंधी-तूफ़ान में मर जाऊंगा। कृपया अपनी झोंपड़ी में मुझे इतनी जगह तो दे दो कि मैं अपनी कोमल सूंड़ को बौछारों से बचा सकूं।"

हाथी विनती कर के बोला—"रक्षा करो मित्र! मैं तो इस आंधी-तूफ़ान में मर जाऊंगा। कृपया अपनी झोंपड़ी में मुझे इतनी जगह तो दे दो कि मैं अपनी कोमल सूंड़ को बौछारों से बचा सकूं।"

किकुयु को दया आ गई। वह बोला—"हाथीजी! मेरी झोंपड़ी तो बहुत छोटी है, पर खैर तुम्हारी सूंड़ समाने भर के लिए किसी तरह जगह किये देता हूँ। अच्छा, जरा धीरे से अपनी सूंड़ अन्दर डालना।"

हाथी ने अपने मित्र को धन्यवाद दिया और बोला—"भाई, मैं किसी-न-किसी दिन तो अवश्य ही तुम्हारी इस नेकी का बदला चुकाऊंगा।"

सूंड़ अन्दर करके हाथी ने महसूस किया कि झोंपड़ी में तो बड़ा बचाव है, बस उसने धीरे से अपना सिर भी अन्दर कर लिया और धीरे-धीरे खिसकते-खिसकते वह समूचा झोंपड़ी में घुस आया। किकुयु ने यह देखा, पर कुछ बोला नहीं। वह मन ही मन सोचने लगा कि 'इसी को कहते हैं अंगुली पकड़ कर पहुँचा पकड़ना। इस हाथी ने तो सारी झोंपड़ी ही संभाल ली है, अब इससे कैसे पिंड छुड़ाऊं?'

किकुयु इसी सोच-विचार में था कि वह कृतघ्न हाथी बोला—"मित्र! तुम्हारा शरीर तो कठोर है, तुम धूप-छांह सभी सह सकते हो, पर इस मूसलाधार वर्षा में मेरी नर्म चमड़ी तो खराब हो जायेगी। इस छोटी-सी झोंपड़ी में हम दो के लिए स्थान नहीं है, इसलिए तुम तो जाओ बाहर और अब मैं इस झोंपड़ी में रहूँगा।"

किकुयु को हाथी की यह कोरी-कोरी बातें सुन कर बड़ा दुःख हुआ। वह अपनी झोंपड़ी छोड़ने को तैयार न था। अतएव उसने हाथी को पहले तो समझाना-बुझाना चाहा, पर बाद में मामला गर्मागर्म हो गया। अब तक पानी कुछ थम गया था, अतएव तमाशा देखने के इरादे से अड़ोस-पड़ोस के और भी जानवर झोंपड़ी के आसपास इकट्ठे हो गये। जब दोनों की बहस जोरों पर थी, जंगल का राजा सिंह गरजता हुआ वहाँ आया और आंखें तरेर कर बोला—"तुम लोगों ने यह क्या तमाशा बनाया हुआ है यहां? तुम्हें क्या मालूम नहीं कि मैं इस जंगल का राजा हूँ। मेरे राज्य में यह सब गड़बड़ मचाने की तुम लोगों

ने कैसे हिम्मत की ?" पर हाथी को देख कर सिंह आश्चर्य से बोला—"मंत्री जी ! तुम कैसे इस झगड़े में फंस गये ?"

अपने राजा के सामने अपनी सूंड़ से तीन बार फर्शी सलाम करने के बाद हाथी अदब से बोला—"महाराज की जय हो ! माई बाप ! गड़बड़ मचाने की गुस्ताखी भला मैं कैसे कर सकता हूँ ? मैं तो अपने इस मित्र से केवल इस झोंपड़ी के विषय में फ़ैसला कर रहा हूँ । हजूर भी देख रहे हैं कि मैं इस झोंपड़ी में रहता हूँ और इस पर मेरा ही हक होना चाहिए ।"

इसके बाद किकुयु की सारी बात सुनने के बाद सिंहराज ने गंभीरता के साथ हाथी से कहा—"देखो, अपने मंत्रियों को मेरा यह हुक्म है कि वे जल्दी ही पंचों को इकट्ठा करें और वह इस मामले की जांच करेंगे । सब बात का पता लगायेंगे ।" फिर सिंहराज किकुयु से बोला—"तुम अक्लमन्द मालूम होते हो जो मेरी प्रजा से विशेष करके मेरे एक मंत्री हाथी से तुमने दोस्ती की है । अब तुम घबड़ाओ मत । तुम्हारी झोंपड़ी कहीं जाती नहीं । मेरी शाही पंचायत की बैठक होने तक इंतज़ार करो । उनके आगे तुम्हें अपने हक को साबित करने का मौका दिया जायगा । और मुझे पूरी उम्मीद है कि पंचों के फ़ैसले से तुम्हें पूरा सन्तोष होगा ।"

बेचारा भोला किकुयु जंगल के राजा की तसल्ली की बातों से बड़ा प्रसन्न हुआ । उसे पूरा भरोसा हो गया कि पंच न्याय की बात कहेंगे और मेरी झोंपड़ी मुझे मिल जायगी ।

कृतघ्न हाथी बोला—"मित्र तुम्हारा शरीर तो कठोर है, तुम धूप-छांह सभी सह सकते हो, पर इस मूसलाधार वर्षा में मेरी नर्म चमड़ी तो खराब हो जायगी । इस छोटी-सी झोंपड़ी में हम दो के लिए स्थान नहीं है, इसलिए तुम तो जाओ बाहर और अब मैं इस झोंपड़ी में रहूंगा ।"

इधर मंत्री महोदय श्रीमान् हाथी जी अन्य मंत्रियों के सहयोग से पंचों के चुनाव में लग गये। श्रीमती लोमड़ी जी पंचों की सिरमौर चुनी गईं। श्री तेंदुआ जी उसके सेक्रेटरी चुने गये। जंगल के अन्य अनुभवी बुजुर्ग यथा बारहसिंगा, भैंसाजी, गेंडाजी आदि उनके अन्य सदस्य थे।

इन सब सदस्यों को देख कर किकुयु ने रौला मचाया कि पंचों में हमारी जाति का कोई नहीं है। ऐसी सूरत में मेरे साथ न्याय नहीं होगा।

इस पर किकुयु को यह कहा गया कि उसकी जाति में ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं है जो कि जंगल के कानूनों को ठीक से जानता हो। फिर इस पंचायत में सब सदस्य माने-गिने अनुभवी और न्यायप्रिय प्राणी हैं। भगवान की ओर से ही वे जंगल के अधिकारी चुने गये हैं, अतएव डरने की कोई बात ही नहीं है, यकीन रखो, तमाम मामले की जांच पक्षपातरहित ढंग से होगी।

पंचों ने पहले हाथी को अपना बयान देने के लिए बुलाया। हाथी महोदय शान से झूमते हुए, अपनी सूंड़ में फूलों के एक गुच्छे को चंवर के सदृश झुलाते हुए आगे आये और बड़ी शान और अदा के साथ गर्दन कुछ टेढ़ी-सी करके किकुयु पर एक तिरछी नजर डाल कर पंचों से बोले—"भाई पंचो! मैं व्यर्थ में आप लोगों का समय नष्ट नहीं करना चाहता। मुझे संक्षेप में जो कुछ कहना है, वह यह है कि मेरे इस मित्र किकुयु ने मुझे अपनी झोंपड़ी की रक्षा के लिए बुलाया था, क्योंकि बात यह थी कि उस तूफानी रात को इसकी झोंपड़ी की खाली जगह में तूफान घुस बैठा था वह झोंपड़ी को उड़ा कर ही ले जाता, अगर मैं उसकी रक्षा के लिए नहीं पहुँचता। अब आप ही बताइये कि मैंने कौनसा अनर्थ कर डाला? एक तो किकुयु की झोंपड़ी बचाई, दूसरे, उसमें खाली पड़ी जगह का सदुपयोग किया। मेरी जगह यदि आप लोगों में से भी कोई होता, तो अवश्य वही करता जो मैंने किया था।"

हाथी का बयान हो चुकने के बाद पंचों ने गीदड़, लकड़बग्घा आदि गवाहों को बुलाया। उन्होंने भी हाथी की बात का समर्थन किया। अब किकुयु को बुलाया गया। उसने झोंपड़ी पर अपने अधिकार के सबूत देने चाहे, पर पंचों ने कहा—"किकुयु जी! हमारे पास तुम्हारी फिजूल की इधर-उधर की बातें सुनने का समय नहीं है। हम तुम से जो बात पूछते हैं उसका संक्षेप में जवाब दो। बाकी सब बात की जांच तो हमने कर ही ली है।"

किकुयु को बीच में ही टोक कर पंचों ने कहा—"बस, बस, हमें कुछ नहीं सुनना है। जो कुछ हमें तुमसे पूछना था पूछ लिया। हमारी जांच पूरी हो गई है।"

इतना कह कर पंच फैसला देने से पहले जरा सुस्ताने के लिए दूसरी जगह हट गये। वहाँ हाथी महोदय ने उन्हें खूब दावत खिलाई। खा पीकर पंचलोग फैसला सुनाने के लिए फिर इकट्ठे हुए और उन्होंने अपना फैसला इस प्रकार पढ़ कर सुना दिया—"हमारे ख्याल में किकुयु को कुछ गलतफहमी हो गई है कि उसने मंत्री महोदय हाथी जी के सहयोग की कद्र न करके उन पर दोष लगाया है। हाथी महोदय ने उनकी भलाई का सब प्रकार से ध्यान रखा कि खाली जगह को जिसमें कभी भी तूफान समा सकता था, अपने लम्बे-चौड़े

शरीर से भर दिया, क्योंकि किकुयु कभी भी ऐसा भारी-भरकम नहीं हो सकता कि झोंपड़ी की खाली जगह का सदुपयोग हो सके, इसलिए वह इस झोंपड़ी को हाथी महोदय के लिये खाली कर दे। हाँ, हम उसके साथ इतना लिहाज कर सकते हैं कि उसे जंगल में थोड़ी-सी जगह दे दी जाय जहाँ कि वह अपने लिए एक छोटी-सी झोंपड़ी बना ले और सिंहराज की छत्रछाया में रहता हुआ अपने भाग्य की सराहना करे।"

फ़ैसला सुन कर हाथी ने अभिमान से अपनी सूंड़ ऊपर उठाई और मुसकरा कर अर्थभरी दृष्टि से किकुयु की ओर ताका मानो कह रहा हो 'देखा तुमने, यहाँ तो जिसकी लाठी उसकी भैंस है'।

बेचारा किकुयु! उन पशुओं के बीच में उसकी भला कहाँ सुनवाई!

हाथी ने अभिमान से अपनी सूंड़ ऊपर उठाई

चेक लोक-कथा
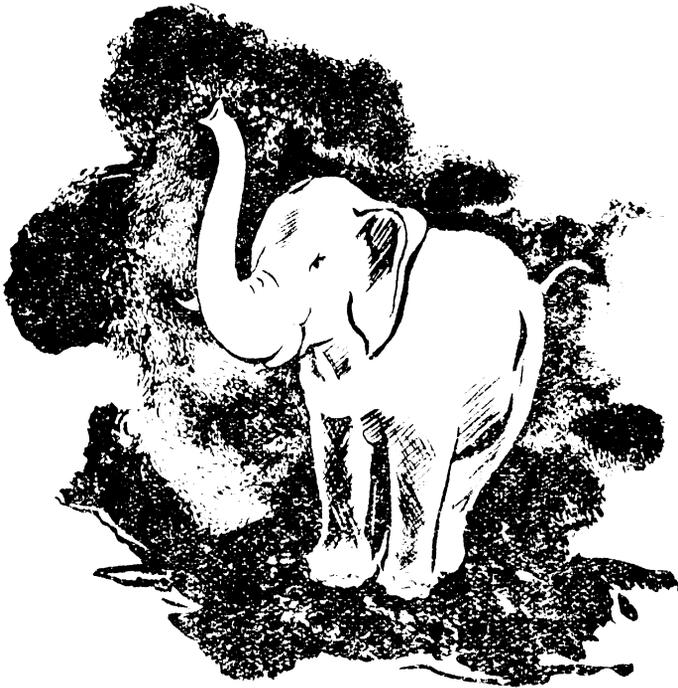
पोपेल्का

व्लादिमीर मिश्तनेर

एक गाँव में एक औरत रहती थी। उसके दो बेटियाँ थीं। उसका पति बहुत सीधा था। बड़ी बेटी जिसका नाम ज्लोबोहा था, बहुत कठोर और नटखट थी, परन्तु दूसरी बेटी पोपेल्का, अच्छी और दयालु थी।

एक बार बाप ने बेटियों से कहा—"मैं नगर में जाऊँगा। तुम लोग क्या चाहती हो? मैं नगर के बाजार से तुम्हारे लिये कुछ चीजें लाऊँ!"

ज्लोबोहा बहुत-सी भेंट चाहती थी—रेशम के कपड़े, आभूषण इत्यादि। मगर पोपेल्का ने कहा—"पिता जी, आपकी जो इच्छा हो वही मेरे लिये ले आयें।"

बाप नगर से सामान खरीद कर घर लौटा। वन की राह चल कर उसने अच्छे-अच्छे नारियल देखे। 'यह पोपेल्का के लिये भेंट है'—उसने सोचा और बाद में तीन छोटे नारियल जेब में डाल लिये।

जब वह घर में पहुँचा, तब ज्लोबोहा ने उससे कहा—"पिता जी, मुझे उपहार दो।"

बाप ने उसे नगर के बाजार में खरीदी हुई सब अच्छी चीजें दे दीं। फिर उसने पोपेल्का से कहा—"मेरी पोपेल्का, मैं तुमको केवल तीन नारियल दे रहा हूँ, जिन्हें मैंने वन में पाया है।" पोपेल्का ने अपने बाप को धन्यवाद देकर सन्दूक में वे नारियल रख दिये।

कुछ दिनों के पीछे उस देश के राजा के महल में बड़ा समारोह था। ज्लोबोहा ने अपनी माँ से कहा—"माँ, क्या मैं राजा के यहाँ समारोह में शामिल होने चली जाऊँ?

माँ ने जवाब दिया—"हाँ प्रिय बेटी, और मैं भी तुम्हारे साथ जाऊँगी। पोपेल्का घर में रहेगी और काम करेगी।"

पोपेल्का ने एक नारियल काटा। कितना आश्चर्य! नारियल के भीतर महीन रेशम की अच्छी पोशाक और छोटी-छोटी जूतियां थीं।

ज्लोबोहा और उसकी माँ के जाने के बाद पोपेल्का उपवन में जाकर रोने लगी। यह देखकर एक कबूतर, जो वृक्ष पर बैठा था, उससे बोला—"पोपेल्का तुम क्यों रोती हो? रोना अच्छा नहीं। सुनो, एक नारियल को तोड़कर देखो फिर तुम राजमहल में जा सकोगी।"

ऐसा कहकर कबूतर उड़ गया। पोपेल्का ने एक नारियल काटा। कितना आश्चर्य! नारियल के भीतर महीन रेशम की अच्छी पोशाक और छोटी-छोटी जूतियाँ थीं। पोपेल्का यह वस्त्र और जूतियाँ पहन कर राजा के महल में गई।

महल में बड़ा समारोह था। सब लोग नाच रहे थे। राजा, जिसका नाम यरोस्लव था, पोपेल्का को देखते ही केवल उसके साथ नाचने लगा। कुछ क्षण बाद राजा ने कहा—"सुन्दर कन्या! ऐ सुन्दर कन्या! तुम्हारा नाम क्या है?"

पोपेल्का ने जवाब दिया—"श्री यरोस्लव जी! मैं आपको अपना नाम नहीं बता सकती।" यरोस्लव उदास हो गया, परन्तु पोपेल्का घर चली गई।

पोपेल्का की माँ और बहन घर में आते ही बोलीं—"पोपेल्का, तू मैली लड़की है, आज राजा के महल में एक मनोरम सुन्दरी आई थी। राजा केवल उसी के साथ नाच रहा था।"

पोपेल्का चुप रही और काम करती गई। उसने अपना भेद नहीं बताया। वह दिन भर उस सुन्दर राजकुमार के बारे में सोचती रही।

इधर पोपेल्का के चले जाने के बाद यरोस्लव सारे दिन बड़ा उदास रहा। उसने सोचा—'वह कन्या बहुत सुन्दर थी, परन्तु मैं उसका नाम तक नहीं जानता हूँ। हो सकता है कि दूसरे उत्सव में वह फिर आये।'

इसीलिये उसने दूसरा उत्सव रचाया।

जब माँ ज्लोबोहा के साथ दूसरे उत्सव के लिये जा रही थी, तब पोपेल्का ने दूसरे नारियल को काटा और उसके भीतर से पहले वस्त्रों से भी अधिक सुन्दर वस्त्र और पहली जूतियों से भी अधिक सुन्दर जूतियाँ निकलीं। पोपेल्का उन्हें पहन कर यरोस्लव राजा के महल में गई। यरोस्लव उसको देखकर बहुत खुश हुआ। वह सारी रात केवल पोपेल्का के साथ ही नाचता रहा।

राजा यरोस्लव पोपेल्का पर इतना मुग्ध हुआ कि वह सारे समय उसी के साथ नाचता रहा।

सवेरे पोपेल्का महल से चुपचाप घर आ गई। कुछ देर बाद माँ और ज्लोबोहा आई। माँ ने कहा—"पोपेल्का! मैली लड़की, आज महल में पहली से भी अधिक सुन्दर एक सुन्दरी आई थी। यरोस्लव राजा उसके पीछे बावला बना हुआ है। परन्तु वह सुन्दरी सवेरे चली गई और यरोस्लव उदास हो गया। समझ में नहीं आता कि वह सुन्दरी कौन है?" मगर पोपेल्का चुपचाप रही और काम करती रही।

कुछ समय के बाद यरोस्लव के महल में तीसरा उत्सव हुआ। पोपेल्का ने तीसरे नारियल को काटा और उसके भीतर से अति सुन्दर वस्त्र और अति सुन्दर जूतियाँ निकलीं। उन्हें पहन कर पोपेल्का रानी की भाँति दिखने लगी। फिर वह महल में गई।

परन्तु पोपेल्का ने उसकी बात नहीं सुनी और महल से भागी। मगर जल्दी से भागने के कारण उसकी एक जूती पाँव से निकल गई।

यरोस्लव पोपेल्का को देखते ही प्यार से पागल-सा हो गया। उसने कहा—"सुन्दरी! ओ सुन्दरी! मेरे यहाँ से न जाओ। किस लिये तुम मुझे अपना नाम नहीं बताना चाहती?" परन्तु पोपेल्का ने उसकी बात नहीं सुनी और वह महल से भागी। मगर भागने की जल्दी में उसकी एक जूती पाँव से निकल गई।

यरोस्लव ने वह जूती ले ली और अपने महल में लौटा। दूसरे दिन से यरोस्लव अपने मन्त्री के साथ सारे देश की यात्रा करने निकला, और वह सब लड़कियों को यह छोटी जूती पहनाता रहा जो पोपेल्का से वहाँ छूट गई थी। इस तरह राजा पोपेल्का को ढूँढ़ता रहा। जब माँ और ज्लोबोहा ने यरोस्लव और उसके मन्त्री को देखा तब उसने पोपेल्का को कहा—"ओ गन्दी लड़की, तू यहाँ से चली जा! यरोस्लव जी आ रहे हैं!" परन्तु यरोस्लव बोला—"नहीं, नहीं! सब लड़कियाँ यहीं रहो।" माँ ने कहा—"यह तो एक गन्दी लड़की है, और इसके पाँव हाथी की तरह हैं। लेकिन मेरी ज्लोबोहा के पाँव छोटे-छोटे हैं, और ज्लोबोहा आपकी जूती अवश्य पहनेगी। प्यारी ज्लोबोहा!

यरोस्लव महाराज को अपने पाँव दिखलाओ।"

मगर ज्लोबोहा वह छोटी जूती नहीं पहन सकी। फिर पोपेल्का बैठ गई और उसने आसानी से छोटी जूती पहन ली। यरोस्लव यह देखकर बोला—"सुन्दरी! ओ सुन्दरी! मेरे महल में कृपया तुरन्त आओ और मैं आप से विवाह करूँगा। मैं आपको बहुत प्यार करता हूँ। क्या आप मुझ से विवाह करना चाहती हैं?"

पोपेल्का ने कहा—"जी हाँ, मैं भी आपको प्यार करती हूँ, और आपकी दुलहिन बनना चाहती हूँ।"

कुछ समय के बाद बड़ी शान और समारोह से उनका विवाह हो गया। जब बाद में पोपेल्का और यरोस्लव महल के उपवन में साथ-साथ सैर कर रहे थे तब उनके ऊपर वही कबूतर उड़ रहा था, जिसने उपवन में पोपेल्का को सलाह दी थी।

दुष्ट सेविका

गीता कृष्णाश्री

कई वर्ष की घटना है, तिब्बत के 'शिगत्सी' शहर में (तिब्बत का दूसरा सबसे बड़ा शहर) एक जौंग पौं (किलाध्यक्ष) रहा करता था। वह सब प्रकार से सुखी था, परन्तु एक बात से वह सदैव दुखी रहा करता था। उसके कोई सन्तान न थी। अन्त में उसने प्रान्त के सबसे बड़े लामा को बुलवा कर पूजा कराने का निश्चय किया। लामा (साधु) आये, पूजा हुई, जिसमें हजारों सांग (तिब्बती रुपया) लग गये और 'चेंन-रे-ज़ी' (तिब्बती देवता) की कृपा से उसके घर एक पुत्री उत्पन्न हुई। परन्तु विधाता की करनी, एक को जन्मदान देकर दूसरे का जीवन मांग लिया। बेचारी माँ अपनी पुत्री का मुँह देखे बिना स्वर्गलोक सिधार गई। जौंग पौं एक महान् शोक में डूब गया और उसने अपना सम्पूर्ण प्रेम अपनी एक मात्र पुत्री रिंजिग-ला में, जो फूल से भी अधिक सुकुमार थी, केन्द्रित कर दिया।

धीरे-धीरे रिंजिग-ला सयानी हो चली। अब जौंग पौं को चिन्ता हुई कि उसकी कौन देखभाल करेगा ? उसने चारों ओर अपने न्येर्पा दौड़ाये कि कहीं से कोई नेक सेविका मिल सके। बड़ी कठिनाई से उनको एक सेविका मिली जो वास्तव में एक दुष्टा थी, तथा जिसने अपने को बड़ी सीधी-सादी दिखा कर जौंग पौं को भी प्रसन्न कर लिया। रिंजिग-ला को उसकी देखभाल में रख दिया गया। दोनों साथ-साथ रहतीं, साथ-साथ घूमने जातीं।

एक दिन सेविका को पानी भरने नदी पर जाते देख रिंजिग-ला भी साथ जाने को हठ करने लगी। जौंग पौं ने प्यार में आकर उसको एक स्वर्ण बाल्टी देकर कहा कि शीघ्र लौट आना। रिंजिग-ला सेविका के साथ नदी की ओर चल पड़ी। रिंजिग-ला के हाथ में थी सोने की बाल्टी तथा सेविका के पास थी लकड़ी की, यह देख कर सेविका को बड़ी ईर्ष्या हुई। नदी पर पहुँच कर उसने रिंजिग-ला से कहा, "चलो हम तुम एक खेल खेलें।"

परन्तु रिंजिग-ला ने कहा, "नहीं, शीघ्र चलो पा-ला (पिता) प्रतीक्षा कर रहे होंगे।"

सेविका ने हठ करके कहा, "ऊंह ! तुम्हें कौन कुछ कहने की सामर्थ्य रखता है ? यदि देर में भी जाओगी तो भी तुम्हारे पा-ला तुम से प्यार से ही बात करेंगे। देखो, हम दोनों अपनी बाल्टी नदी में फेंक कर देखें कि किसकी तैरती है और किसकी डूबती है ?"

रिंजिग-ला ने उत्तर दिया, "वाह ! यह भी कोई देखने की बात है ? मेरी बाल्टी धातु की होने से अवश्य डूब जायेगी परन्तु तुम्हारी लकड़ी की बाल्टी हल्की होने से तैरेगी।"

पर उस दुष्ट सेविका ने एक बड़ी-बूढ़ी के समान कहा, "तुम तो अभी बच्ची हो, ऐसा कैसे हो सकता है ? स्वर्ण की बाल्टी मूल्यवान वस्तु होने से नहीं डूबेगी, परन्तु लकड़ी की बाल्टी पुरानी तथा सस्ती होने से डूब जायेगी। तुम देखो तो सही।" तब दोनों ने अपनी-अपनी बाल्टी नदी में फेंक दी। देखते-देखते स्वर्ण की बाल्टी नदी में डूब

गई तथा लकड़ी की तैरने लगी। लकड़ी की बाल्टी तो वे किसी भांति निकाल सकीं परन्तु स्वर्ण की बाल्टी का कुछ पता न चला। इधर बेचारी रिंजिग-ला हाथ मल-मल कर पछताने लगी, उधर वह दुष्टा अपनी लकड़ी की बाल्टी में पानी भर मन ही मन प्रसन्न होकर घर लौट आई।

उसको अकेली देख कर जौंग पौं ने पूछा, "रिंजिग-ला किधर है ?"

सेविका ने मुँह बना कर कहा, "उसने अपनी बाल्टी खो दी है, और अब घर आने से डर रही है।"

देखते-देखते स्वर्ण की बाल्टी नदी में डूब गई तथा लकड़ी की तैरने लगी। बेचारी रिंजिग-ला हाथ मलकर पछताने लगी

जौंग पौं बोले, "अरे! उससे जाकर बोलो घर आये और बाल्टी का शोक न करे।" परन्तु उस सेविका ने रिंजिग-ला से जाकर यह झूठ बोल दिया कि उसका पा-ला अत्यन्त क्रोधित हुआ और बोला कि अगर रिंजिग-ला शीघ्र बाल्टी नहीं लाई तो उसे वह जान से मार डालेगा।

बेचारी रिंजिग-ला ने हिचकी लेकर पूछा, "अब क्या करें ?"

सेविका ने कहा, "चलो भाग चलें, और हाँ! ऐसा करो कि तुम मेरे कपड़े पहन

लो और मैं तुम्हारे, बस हमें कोई पहचान न पायेगा।" रिंजिग-ला मान गई और दोनों ने अपने एक दूसरे से कपड़े बदल लिये परन्तु भाग्यवश वे अपने गले में डोरी से बंधे 'पागे' (आभूषण की भांति तावीज) बदलने भूल गइ। दोनों चुपचाप वहाँ से भाग निकलीं।

चलते-चलते उन्हें एक कुटा (जमींदार) के कुछ चरवाहे मिले, जिन्होंने उन्हें देख कर पूछा, "तुम लोगों ने अपने कपड़े क्यों बदले हैं ?" सेविका ने एक बड़े घर की लड़की की भांति उत्तर नहीं दिया, केवल अपनी दृष्टि फेर आगे बढ़ गई, परन्तु रिंजिग-ला एक सेविका के समान यह उत्तर देकर—"हमने कपड़े नहीं बदले हैं और न मैं किलाध्यक्ष की लड़की हूँ", सेविका के पीछे चली गई। थोड़ी दूर जाने पर उन्हें कुटा के खच्चरवाले मिले, फिर वही प्रश्न वही उत्तर। चलते-चलते वे उसी कुटा के घर जा पहुँचीं और रात आई देख कर दोनों ने वहीं रहने का निश्चय किया। रिंजिग-ला ने कुटा के पास जाकर अपने तथा अपनी स्वामिनी के वहाँ रहने की आज्ञा मांगी, कुटा ने आज्ञा दे दी।

इधर जब कुटा के एकमात्र पुत्र नामग्याल ने इन दोनों को देखा तो मन ही मन जान गया कि इन दोनों ने अवश्य कपड़े बदले हैं। एक दिन मौका पाकर तथा रिंजिग-ला को अकेली देख कर उसने पूछा कि क्या यह बात सत्य है ? परन्तु रिंजिग-ला ने उसे यह कह कर टाल दिया कि 'सेकुशो' (कुमार) को ग़लतफ़हमी हुई है और वैसे उन्हें अपने कपड़े बदलने की आवश्यकता भी क्या है ?

नामग्याल इन बातों में आनेवाला नहीं था, उसने एक दिन दोनों की परीक्षा लेने की ठानी। उसने रिंजिग-ला को बहुत सारा कच्चा ऊन देकर कहा, "तुम आज याक (बैल) चराने ले जाना तथा इसका धागा भी बना देना।" रिंजिग-ला दोनों लेकर चली गई। जाते-जाते उसने कच्ची ऊन के टुकड़े वृक्षों की शाखाओं पर रख दिये और रास्ते में पड़े हुए कुछ काले और कुछ सफ़ेद पत्थर भी चुन लिए। चरने के स्थान पर आकर उसने काले-सफ़ेद पत्थरों को इधर-उधर डाल दिया, जिससे याक भी इधर-उधर फैल कर चरने लगे। शाम को जब घर जाने का समय हुआ तो उसने उन पत्थरों को फिर चुन लिया। उसके ऐसा करने से याक भी चरना छोड़ कर एक जगह इकट्ठे हो गये। रिंजिग-ला उनको लेकर घर की ओर चल दी। रास्ते में उसने जो ऊन वृक्षों की शाखाओं पर रखी थी वह धागों में बदल गई थी। रिंजिग-ला ने उनको लपेट कर गोला बना दिया।

उधर रिंजिग-ला याक चराने बाहर गई थी, इधर सेविका को पानी भरने का काम सौंपा गया। नामग्याल ने उसकी परीक्षा करने के इरादे से पुकार कर उससे यह कहा, "तुम सोने की बाल्टी ले जाती हो तो कौन बड़ी बात है ? तुम चांदी की बाल्टी ले जाती हो तो भी क्या है ? मेरा खच्चर-खाना खच्चरों से भरा है, मेरे अस्तबल में घोड़े ही घोड़े हैं। मेरा घेरा याकों से परिपूर्ण है। तुम्हारे यहाँ क्या है ? मेरा पा-ला सोने के आसन पर बैठता है, मेरी अमां-ला (मां) चांदी के आसन पर तथा मैं स्वयं सीप के आसन पर बैठता हूँ। तुम अपने को समझती क्या हो ? तुम्हारे यहाँ तो ऐसा भी नहीं है।" सेविका—क्योंकि एक साधारण सेविका थी जिसको अपने स्वामी के धन-दौलत के बारे में अधिक ज्ञात न था—कुछ उत्तर न दे सकी, केवल अपनी दृष्टि फेर कर काम करने लगी। नामग्याल मन ही मन मुस्करा कर वहाँ से चलता बना।

दूसरे दिन उसने सेविका को याक चराने बाहर भेजा और उसको भी रिंजिग-ला की भांति ऊन कातने को दी। सेविका झट से रिंजिग-ला के पास पहुँची और उससे पूछा कि कल उसने यह सब इतने कम समय में कैसे किया? रिंजिग-ला ने उसे सब कुछ बता दिया कि कैसे उसने ऊन पेड़ों पर रखी, कैसे उसके पत्थरों के जादू से याक उसका कहना मानने लगे और अन्त में कैसे पेड़ों ने उस पर दया करके अपनी शाखाओं से ऊन का धागा बना दिया, इत्यादि-इत्यादि। इतना सुन कर सेविका वहाँ से याक तथा ऊन लेकर चली गई।

इधर सेविका की भांति रिंजिग-ला को भी पानी भरने की आज्ञा मिली। नामग्याल ने फिर परीक्षा लेने की सोची और उसी भांति अपने प्रश्न तथा अपने गौरव का वर्णन किया। रिंजिग-ला अपने पा-ला की इस भांति उपेक्षा न सुन सकी और तुनक कर बोली —"ये सोने की बाल्टी जो मेरे हाथ में है वह हमारे जौंग (जिले) जैसी नहीं है, हमारी में किंचित मात्र भी तांबा नहीं मिला हुआ है, यह चांदी की बाल्टी भी हमारे जौंग जैसी नहीं है, हमारी में जरा-सी भी मिलावट नहीं है। तुम अपने को क्या समझते हो? तुम अपने खच्चरों की प्रशंसा कर रहे हो, यदि हमारे देखो तो नेत्र खुल जायेंगे, हमारे जौंग में तुम्हारे जैसे मरियल खच्चर नहीं हैं। तुम्हारे घोड़े न हम से संख्या में अधिक और न ताकत में। तुम्हारे याक—उनके बारे में भी सुन लो। हमारे पास लाखों होंगे परन्तु उनमें एक भी 'ए-को' (नीची जाति का याक) नहीं मिलेगा। तुम समझते क्या हो? मान लिया तुम्हारे पा-ला सोने के आसन पर बैठते हैं पर वह भी हमारे जौंग जैसा नहीं है, हमारे में तांबा तुम्हारे जैसा नहीं मिला हुआ है। तुम्हारी अमां-ला जिस चांदी के आसन पर बैठती हैं वह भी हमारे जैसा नहीं है, हमारे में मिलावट जरा-सी भी नहीं है। जिस सीप के आसन पर तुम स्वयं बैठते हो वह भी हमारे जैसा नहीं है, हमारे में एक भी सफेद पत्थर नहीं मिलेगा। तुम अपने को समझते क्या हो?"

इतना सुन कर नामग्याल चुप रहा।

इधर इनमें यह ताना-तानी चल रही थी, उधर सेविका अपने काम में व्यस्त थी। रिंजिग-ला की भांति उसने ऊन वृक्षों की शाखाओं पर रखी तथा काले-सफेद पत्थर भी चुन लिए। चरने के स्थान पर पहुँच कर उसने रिंजिग-ला की भांति पत्थर भी इधर-उधर डाल दिये, परन्तु याक ठीक से नहीं फैले और न वे ठीक से एकत्रित हुए। जब शाम को उसने वही पत्थर फिर चुन लिए तो उसको कई बार उनके पीछे भागना पड़ा। और जब वह वृक्षों के पास पहुँची तो उसने देखा कि ऊन का धागा नहीं बना, उल्टे हवा से ऊन के टुकड़े इधर-उधर उड़ गये। मारे क्रोध के उसको टुकड़े भी नहीं दिखाई दिये। किसी भांति उनको चुन कर एकत्रित किया और रात को जाकर कहीं वह घर पहुँची।

नामग्याल ने जब उसको ऐसी हालत में वापस आते देखा तो वह शीघ्र सब जान गया और अपनी बात की पुष्टि करने को उसने एक दिन सेविका को बहुत समीप से देखा। उसने देखा कि सेविका के बाल मैले तथा धुंधले थे, उसका 'पांगे' (तावीज) गन्दा था तथा उसके बटुए में केवल सुई-धागा, दो-तीन झूठे नग तथा कांच के मोती मिले। उधर रिंजिग-ला के बाल साफ, चमकीले तथा रेशम के समान मुलायम प्रतीत

होते थे, उसका 'पांगे' साफ तथा सच्चे नगों से जड़ा था, उसमें एक अमूल्य सुगन्धित औषधि भी थी तथा उसके बटुए में रेशमी धागा, सच्चे मोती, हीरे तथा कुछ अमूल्य नीलम भी थे। अब नामग्याल को और किसी सबूत की आवश्यकता न थी। वह तुरन्त रिंजिग-ला के पास पहुँचा और अपनी सब खोज उससे कह दी। फिर उसने रिंजिग-ला से पूछा, "सेमूकुशो रिंजिग-ला (कुमारी) सत्य कहो, तुम्हारे पिता जौंग पौं हैं न ?" रिंजिग-ला चुप रही। पर नामग्याल न माना। अन्त में रिंजिग-ला को 'हां' कहना पड़ा और उसने नामग्याल से प्रार्थना की कि वह उसको और बताने को बाधित न करे।

सेविका का घोड़ा बिदक कर तेजी से भाग निकला और ले गया सेविका को अपने पीछे घसीटता हुआ कभी पर्वत के ऊपर, कभी पर्वत के नीचे

नामग्याल ने उसे सांत्वना देकर कहा, "घबराओ नहीं सेमूकुशो मैं ठीक कर दूंगा। कल सुबह मैं तुम दोनों को पर्वत की शिखर पर बने गुम्पा (मन्दिर) में धूप जलाने तथा पूजा करने भेजूंगा। जिन घोड़ों पर तुम दोनों सवारी करोगी वे ऐसे चतुर जानवर होंगे, जो सब समझते हैं। गुम्पा पहुँच कर तुम घोड़ों को पेड़ से नहीं अपने पैरों से बांधना वरना वे भाग जायेंगे। तुम्हारे झोले में खाना होगा पर सेविका के झोले में होंगे जिन्दा तीतर। तुम किसी भांति ऐसा करना कि सेविका ही पहले अपना झोला खोले। उसके खुलते ही उसमें से तीतर शोर मचा कर उड़ेंगे। सेविका का घोड़ा (जिसको पहले से ही मालूम होगा कि क्या करना चाहिये) उसको पीछे घसीटता हुआ भाग जायेगा, इसी भांति सेविका के दुष्ट जीवन का अन्त हो जायेगा। तुम अपना खाना खा कर—क्योंकि तुम्हारा घोड़ा सीधा अपनी जगह पर खड़ा रहेगा—घर आ जाना।" रिंजिग-ला मान गई।

दूसरे दिन प्रातःकाल दोनों पूजा करने, पर्वत पर बने गुम्पा में गये। वहाँ पहुँच कर दोनों ने अपने-अपने घोड़े अपने-अपने पैरों से बांध लिए। सेविका ने रिंजिग-ला से अपना थैला खोलने को कहा, परन्तु रिंजिग-ला ने कुशलता से मना करके कहा, "तुम्हारे थैले में अवश्य स्वादिष्ट भोजन होगा, तुम सेमूकुशो जो ठहरीं, पर मेरे थैले में सेविका का भोजन सत्तू ही होगा। पहले तुम ही अपना खोल कर देखो।"

जैसे ही सेविका ने अपना थैला खोला, उसमें से तीतर कोलाहल मचा कर बाहर निकले, जिसको सुन कर सेविका का घोड़ा बिदक कर तेजी से भाग निकला और ले गया

सेविका को अपने पीछे घसीटता हुआ—कभी पर्वत के ऊपर, कभी पर्वत से नीचे। एक क्षण में सेविका के टुकड़े-टुकड़े हो गये। बड़ा टुकड़ा जौ के दाने से बड़ा नहीं और छोटा टुकड़ा शलजम के बीज से भी छोटा था। रिंजिग-ला अपना खाना खा घोड़े पर जो अपनी जगह पर खड़ा था चढ़कर घर चली गई।

घर पहुँच कर नामग्याल ने पूछा, "क्या हुआ ?" रिंजिग-ला ने बताया कि सेविका के टुकड़े-टुकड़े हो गये—बड़ा टुकड़ा जौ के दाने से बड़ा नहीं था, छोटा टुकड़ा शलजम के बीज से भी छोटा था। नामग्याल ने प्रसन्न होकर रिंजिग-ला से विवाह कर लिया।

तब नामग्याल का पा-ला (पिता) सोने के आसन पर बैठा, नामग्याल की अमां-ला (मां) चांदी के आसन पर बैठी, नामग्याल स्वयं सीप के आसन पर बैठा तथा नामग्याल की वधू रिंजिग-ला नीलम के आसन पर बैठी।

शिल्पी का बेटा

प्रोणवीर

कहते हैं कि एक बादशाह ने अपनी प्रजा पर अनुचित कर लाद कर तथा अपने अधीन राज्यों को लूटकर खूब दौलत बटोर ली। इस दौलत को सुरक्षित रखने के लिये उसने बड़े-बड़े पत्थरों का एक विशाल महल बनाने की सोची।

इस बादशाह के राज्य में एक चतुर शिल्पी रहता था। वह हमेशा इस ताक में रहता था कि किसी तरह बादशाह का खज़ाना प्राप्त करके उसे दीन-दुःखियों की भलाई में खर्च कर सके। अब जब इस विशाल महल के बनाने का काम उसके सुपुर्द हुआ तो उसकी खुशी का ठिकाना न रहा।

जब महल के बनाने का काम पूरे ज़ोर-शोर से आरम्भ था तो शिल्पी ने चुपके से एक दीवार में एक ऐसा पत्थर रख दिया जो कि एक अथवा दो व्यक्तियों की सहायता से अपने स्थान से बड़ी सुगमता से निकाला और रक्खा जा सकता था। आखिर महल तैयार हो गया और बादशाह की सारी दौलत उसमें रख दी गई।

संयोग से महल के बन चुकने के थोड़े ही दिन बाद शिल्पी सख्त बीमार हो गया। अपना अन्तकाल आया देख उसने अपने दोनों बेटों को बुलाया और किस प्रकार उसने बादशाह के नये महल की एक दीवार में एक आसानी से हटाया जा सकने वाला पत्थर रक्खा था, यह भेद बता दिया। फिर कहा,

जितना धन दोनों उठा सके, उठाकर निकल आये और उस पत्थर को यथास्थान रखकर पहरेदारों से बचते बचाते वे घर पहुँच गये।

"बेटा, यह सब मैंने केवल ग़रीबों की भलाई के लिये ही किया है, ताकि तुम उसकी सारी दौलत को निकाल कर देश की भलाई के लिये खर्च सको। पर यह भेद किसी पर भी प्रकट नहीं होना चाहिये।"

अपने पिता के मरने के बाद बेटों ने उसकी योजना से पूरा-पूरा लाभ उठाने की सोची। वे एक रात को छिप कर बादशाह के विशाल महल की दीवार तक पहुँचे, और अपने पिता द्वारा बताये गये स्थान को ढूँढ कर बड़ी आसानी से वह पत्थर निकाल कर अन्दर घुस गये। दौलत के ऊँचे-ऊँचे ढेर देखकर उनकी ख़ुशी का ठिकाना न रहा। जितना धन दोनों उठा सके, उठा कर निकल आये और उस पत्थर को यथास्थान रख कर पहरेदारों से बचते-बचाते वे घर पहुँच गये।

अगले दिन जब बादशाह अपनी दौलत देखने आया तो दौलत के ढेरों को हिला हुआ देखकर चौंक पड़ा। उसी समय पूछताछ आरम्भ हो गई। महल के चारों तरफ़ जांच की गई। कहीं भी सेंध के निशान दृष्टिगोचर न हुये। आख़िर थक हार कर बादशाह चुप हो गया।

जब उससे अगले दिन बादशाह फिर दौलत का निरीक्षण करने गया तो फिर ढेरों को हिला हुआ देखकर वह और भी आश्चर्य में पड़ गया। शंकित पहरेदारों की पकड़-धकड़ आरम्भ हो गई, लेकिन कोई नतीजा न निकला।

आख़िर बादशाह ने दौलत के ढेरों के चारों ओर फन्दे लगवा दिये ताकि जो कोई भी धन उठाने आये वह उनमें फँस जाये।

अगले दिन फिर शिल्पी के बेटों ने बादशाह के दौलत के महल में उसी रास्ते से प्रवेश किया। फन्दों से वाकिफ़ न होते हुये ज्यों ही एक भाई ढेर की ओर बढ़ा कि एक फन्दे में वह पकड़ा गया। उसने स्वयं को छुड़ाने की काफ़ी कोशिश की, दूसरे भाई ने भी काफ़ी दाँव-पेंच लगाये, परन्तु वह भी उसे छुड़ा न सका। आखिर फँसे हुये भाई ने कहा, "यदि मुझे ज़िन्दा ही बादशाह के सिपाहियों ने पकड़ लिया तो तुम सब की मौत आ जायेगी। तुम मेरा सिर काट कर ले जाओ ताकि बादशाह मेरी लाश को पहचान न सके।"

दूसरे भाई ने ऐसा ही किया और उसका सिर काटकर घर ले आया।

सुबह जब बादशाह अपनी दौलत देखने आया तो सिर के बग़ैर चोर की लाश देखकर वह चकित रह गया। कमरे की सारी दीवारें देखी गईं परन्तु न तो कोई पत्थर टूटा हुआ दीखा और न ही कोई दरवाज़ा, जिससे कि चोर अन्दर आया हो। परन्तु बादशाह ने चोर का पता लगाने की ठान रखी थी। उसने हुक्म दिया कि बेसिर की लाश को चौक में लटका दिया जाय और जो व्यक्ति भी उस स्थान पर रोने के लिये आवे उसे गिरफ़्तार कर लिया जाय।

जब उन लड़कों की माँ ने यह ख़बर सुनी तो उसका दिल बैठ गया। उसने अपने दूसरे बेटे से भाई की लाश को किसी-न-किसी उपाय से घर लाने के लिये कहा।

दूसरे भाई ने जी तोड़ चेष्टा की लाश प्राप्त करने की, परन्तु लाश के इर्द-गिर्द पहरा इतना कड़ा था कि उसकी सभी चेष्टायें विफल रहीं। लेकिन वह चुप नहीं बैठ सकता था, क्योंकि उसकी माँ अपने बेटे की लाश प्राप्त करने के लिये ज़िद पकड़े हुये थी।

आधी रात के समय जब सड़क सुनसान हो गई तो जल्दी से उसने अपने भाई की लाश खोली और उसे एक गधे पर बाँधकर घर ले आया

आखिर उसे एक युक्ति सूझी। बहुत से गधों पर उसने चमड़े के थैलों में शराब लादी और अपने भाई की लाश की ओर चल दिया। लाश के पास से, जहाँ कि सिपाहियों का कड़ा पहरा था, गुज़रते हुये उसने कुछ थैलों के मुँह ढीले कर दिये, जिससे शराब नीचे गिरने लगी।

शराब को गिरता देख वह छाती पीट-पीट कर चिल्लाने लगा कि हाय! मेरी क़ीमती शराब बही जा रही है। वह कभी इधर दौड़ता तो कभी उधर। परन्तु शराब लगातार थैलों में से बह रही थी।

कहते हैं मुफ्त की शराब काज़ी को भी हलाल होती है। सिपाहियों की नज़र जब शराब पर पड़ी तो उनकी बाँछें खिल गईं। मौके से फ़ायदा उठाने के लिये सभी बर्तन लेकर गधों की ओर भागे और शराब पीने लगे। शिल्पी का बेटा झूठ-मूठ ज़ोर-ज़ोर से चिल्ला-चिल्ला कर सिपाहियों को कोसने लगा। आखिर, जैसा कि उसने सोचा था, वैसा ही हुआ और सिपाहियों ने खूब जी भर कर शराब पी।

सिपाहियों के बेहोश हो जाने के बाद शिल्पी का लड़का वहीं खड़ा रहा और रात की प्रतीक्षा करने लगा। आधी रात के समय जब सड़क सुनसान हो गई तो जल्दी से उसने अपने भाई की लाश खोली और उसे एक गधे पर बाँध कर घर ले आया। अपने बेटे की लाश पाकर माँ को कुछ तसल्ली हुई।

जब बादशाह के कानों में लाश के भी चोरी चले जाने की ख़बर पहुँची तो उसके

तन-बदन में आग लग गई। उसने चोर को पकड़ने की एक और युक्ति सोची। उसने घोषणा कर दी कि जो भी व्यक्ति सबसे बढ़िया कारनामा जो कि उसने स्वयं किया हो बादशाह की लड़की को सुनायेगा, उसके साथ शाहज़ादी का विवाह कर दिया जायेगा। इसमें भी एक चाल थी।

शिल्पी के बेटे ने भी यह घोषणा सुनी। बादशाह के अभिप्राय को वह भाँप गया और एक बार फिर उसने बादशाह को छकाने की ठानी। एक मृत व्यक्ति की भुजा काट कर उसने अपने कपड़ों के नीचे छुपा ली और रात के समय बादशाह के महल की ओर रवाना हो गया। जब शाहज़ादी ने उससे प्रश्न किया तो उसने दौलत के महल में अपने भाई के फँसने और उसके द्वारा उसका सिर काटे जाने की बात बता दी। और यह भी बता दिया कि किस प्रकार पहरेदारों की आँखों में धूल झोंक कर वह अपने भाई की लाश भी ले उड़ा था। शाहज़ादी को सब समझा दिया गया था। उसके मुख से इतनी बात सुनते ही उसने उसे बाहु से पकड़ना चाहा, परन्तु इससे पहले ही शिल्पी के चालाक बेटे ने अपने कपड़ों के नीचे छुपाई हुई भुजा को उसके हाथ में थमा दिया और अँधेरे की आड़ लेकर खिसक गया।

चोर की होशियारी की खबर जब बादशाह के कानों में पहुँची तो उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। आख़िर उसे यह घोषणा करनी ही पड़ी कि यदि वह चालाक आदमी साफ़-साफ़ आकर बादशाह के सम्मुख सब कुछ कह दे तो वह उसे क्षमा कर देगा।

शिल्पी के बेटे ने भी यह अवसर उचित समझा और बादशाह के दरबार में हाज़िर हो गया। बादशाह उसकी होशियारी और साहस को देखकर बहुत प्रभावित हुआ और वायदे के अनुसार उसने अपनी शाहज़ादी का विवाह उसके साथ कर दिया।

राजा ने उसे एक छोटा-सा कुत्ता देकर कहा, "ओ-पा-मे के नाम पर अपने दुःख की बात भूल कर यह कुत्ता लो। परन्तु एक बात अवश्य ध्यान में रखना, कुत्ते को सदैव अपने से पहले खिलाना, चाहे कुछ भी क्यों न खाओ।"

झील का कुत्ता

गीता कृष्णात्री

बहुत समय की बात है, तिब्बत के खम[1] प्रान्त में छैवांग नाम का लड़का अपनी सौतेली माँ के साथ रहता था। माँ स्वयं तो बड़े ठाठ से रहती थी, खूब अच्छा भोजन खाती तथा अच्छे वस्त्र पहनती थी, परन्तु बेचारे छैवांग को फटे चीथड़े पहनने को और केवल मटर का मोटा आटा खाने को देती थी। यही नहीं, उससे सारा काम करवाती थी जैसे गोबर व सूखे पत्ते बटोर कर लाना, लकड़ी फाड़ना, आग जलाना, दूध निकालना, यहाँ तक कि उसे याक[2] को पहाड़ पर चराने ले जाना पड़ता था। इसी कारण बेचारा बड़ा दुःखी रहता था। एक दिन जीवन से निराश होकर एक झील के किनारे बैठ कर वह फूट-फूट कर रोने लगा।

---

१. पूर्वी तिब्बत का प्रान्त।

२. तिब्बती बैल।

उसका करुण रुदन सुन कर झील के भीतर से झील राजा का न्येर्पा (सम्पत्ति की देखभाल करनेवाला) वहाँ पहुँचा, जिसने उससे पूछा, "क्यों भाई क्यों रोते हो ?" बेचारे छैवांग ने हिचकी ले-लेकर बताया कि उसे सारे दिन काम करना पड़ता है, याकों को चराने ले जाना पड़ता है, और खाने को उसे केवल सड़ी मटर का आटा मिलता है । अब वह जीवन से ऊब गया है ।

न्येर्पा बोला, "निराश न हो भाई, तुम मेरे साथ चलो, मैं तुम्हें झील राजा के पास ले चलूंगा । तुम अपने नेत्र बन्द करो, जब मैं कहूँ तभी खोलना ।" छैवांग ने बात मान ली, और दोनों झील में घुस गये । जब छैवांग ने न्येर्पा के कहने पर अपने नेत्र खोले तो उसने अपने को एक भव्य महल में पाया, जिसकी जगमगाहट से बेचारे के नेत्र चकाचौंध हो गये । उसने अपनी आंखें फिर मलीं और देखा तो झील राजा उसके सम्मुख एक जगमगाते सिंहासन पर बैठा था । झील राजा ने बड़े प्यार से उसके रोने का कारण पूछा । छैवांग ने वही बात दोहरा दी जो उसने न्येर्पा से कही थी । राजा ने उसे एक छोटा-सा कुत्ता देकर कहा, "ओ-पा-मे' (तिब्बती देवता) के नाम पर अपने दुःख की बात भूल कर यह कुत्ता लो । परन्तु एक बात अवश्य ध्यान में रखना, कुत्ते को सदैव अपने से पहले खिलाना, चाहे तुम कुछ भी क्यों न खाओ ।"

न्येर्पा ने उससे फिर नेत्र बन्द करने को कहा, और जब उसने नेत्र खोले तो अपने को उसी झील के किनारे खड़े पाया, और वह कुत्ता लेकर घर चला गया । परन्तु घर जाकर वह कुत्ते को पहले खिलाना भूल गया और स्वयं खाना खा कर उसने कुत्ते के सम्मुख बचा-खुचा डाल दिया । जब कुत्ते ने यह देखा तो चुपचाप खिसक गया । छैवांग ने उसे बहुत खोजा परन्तु खोज व्यर्थ गई । अब छैवांग को बड़ी निराशा हुई, और फिर उसी झील के किनारे उसने रोना शुरू कर दिया ।

फिर वही न्येर्पा पानी से निकल कर आया और उसने पूछा, "अब क्या दुःख है ?" छैवांग ने उसे बताया कि वह कुत्ते को पहले खिलाना भूल गया, और इसी कारण कुत्ता भाग गया । न्येर्पा ने उसे फिर आंख बन्द करने को कहा और उसे फिर झील राजा के पास ले गया । राजा ने फिर उससे रोने का कारण पूछा । छैवांग ने वही बात दोहरा दी जो उसने न्येर्पा से कही थी । राजा ने उसे कुत्ता वापिस देकर कहा कि अब उसे ऐसी भूल नहीं करनी चाहिये, क्योंकि वह उसका अन्तिम अवसर है ।

छैवांग प्रसन्न होकर अपने घर गया और सदैव कुत्ते को अपने से पहले खाना खिलाने लगा । इसके पश्चात् प्रतिदिन जब वह याक चरा कर घर लौटता तो उसे अपनी मनचाही वस्तु मिलती । जैसा स्वादिष्ट भोजन वह चाहता उसे रसोईघर में मिलता, धन उसे अपने बटुवे में मिलता, उत्तम वस्त्र उसे अपनी अलमारी में मिलते, मतलब यह कि जिस वस्तु की वह इच्छा प्रकट करता, उसे तुरन्त प्राप्त होती । उसकी माँ आश्चर्य से चकित थी कि आखिर यह सब आता कहाँ से है ? एक दिन उसने मन में ठानी कि वह स्वयं याक चराने ले जायेगी और देखेगी । यह सोच उसने छैवांग को घर पर रहने का आदेश दिया ।

छैवांग स्वयं भी बड़ा चकित था कि जब से उसके पास कुत्ता आया है, तब से उसे

किसी वस्तु की कमी नहीं होती। इस रहस्य को खोलने के लिये वह चुप-चाप रोशनदान पर चढ़ गया और झाँक कर देखने लगा कि कुत्ता क्या करता है। उसने देखा कि कुत्ता अपनी खाल उतार कर एक अनुपम सुन्दरी बन गया है जो शीघ्र काम में लग गई। जिस वस्तु की उसे आवश्यकता होती वह धरती लीप कर थपथपा देती और वह वस्तु उसके सम्मुख आ जाती। तिजोरी में उसने चांदी डाली, सम्पा (तिब्बती जौ का सत्तू) के थैले में (याक के चमड़े का) उसने सम्पा डाला, गेहूँ के थैले में गेहूँ, चावल के थैले में चावल इत्यादि। छैवांग युवती की सुन्दरता पर मुग्ध हो गया और शीघ्र रोशनदान से कूद उसने कुत्ते की खाल आग में डाल दी। लड़की ने अनेकों बार छैवांग से खाल को न जलाने की प्रार्थना की, परन्तु उसने एक न सुनी और उसने खाल को जला कर राख कर दिया।

उसने देखा कि कुत्ता अपनी खाल उतार कर एक अनुपम सुन्दरी बन गया है जो शीघ्र काम में लग गई।

यह सब तो हुआ परन्तु अब छैवांग को इस बात का भय हुआ कि यदि जोंग पोंन (किलाध्यक्ष) के लड़के ने उस युवती को देख लिया, तो वह उसकी सुन्दरता पर मोहित हो उसे अपनी पत्नी बना लेगा। इसी भय के कारण उसने युवती के मुख पर कालिख पोत दी। परन्तु जब वह कुछ समय पश्चात् एक धनवान व्यक्ति बन गया तो उसने लड़की के मुँह पर से कालिख धो दी। उसे लड़की की सुन्दरता पर गर्व था। उसने उस सुन्दरी की कई मूर्तियां बना कर सब रास्तों पर लगवा दीं।

जब किलाध्यक्ष के पुत्र ने उन मूर्तियों को देखा तो उसके हृदय में युवती को अपनी संगिनी बनाने की इच्छा प्रबल हो उठी और उसने तत्काल अपने गुप्तचर उसकी खोज लगाने को भेजे, वे सीधे छैवांग के पास पहुँचे और बोले कि उन्हें किलाध्यक्ष से आज्ञा मिली है लड़की को पकड़ कर लाने की। और वे उसे पकड़ कर ले गये।

छैवांग के क्रोध की कोई सीमा न रही और उसने किलाध्यक्ष से बदला लेने की ठानी। उसने सोचा कि उसे अपने धन के कारण मनुष्यों को अपनी ओर मिलाने में कोई कठिनाई नहीं होगी, परन्तु कोई भी तनिक से धन के लिये किलाध्यक्ष से शत्रुता मोल लेने को तत्पर न हुआ। बेचारे छैवांग का हृदय टूट गया और वह फिर उसी झील के किनारे बैठ कर रोने लगा।

रुदन सुन वही न्येर्पा, झील से बाहर आया उसने अचरज से पूछा, "अब क्या मुसीबत है ?" लड़के ने उत्तर दिया—"जो कुत्ता झील राजा ने उसे दिया था वह अपनी खाल उतार कर एक अनुपम सुन्दरी बन गया। फिर उस (छैवांग) ने खाल जला दी और अब किलाध्यक्ष का लड़का उसकी सुन्दरता पर मुग्ध हो उसे बलात् पकड़ ले गया है"। न्येर्पा फिर उसी भांति उसे झील राजा के पास ले गया, उसने भी पूछा कि अब वह किस बात पर आंसू बहाता है। छैवांग ने वही बात दोहरा दी जो उसने न्येर्पा से कही थी और राजा से सैनिक मांगे ताकि वह किलाध्यक्ष से लड़ सके। झील राजा ने उसे एक डिब्बा दिया और कहा कि इस डिब्बे में सैनिक भरे हुए हैं; रणक्षेत्र में उसे डिब्बा खोलना चाहिये और ललकारना चाहिये 'लड़ो'। डिब्बे के भीतर से सैनिक निकल कर लड़ना शुरू कर देंगे। उसने एक बोतल भी दी और कहा कि इस बोतल को वह अपने शत्रुओं से ऊंची जगह खड़े होकर खोले और कहे, 'बहा दो सब को।' छैवांग डिब्बा व बोतल ले कर घर पहुँचा और उसने किलाध्यक्ष के पास सन्देश भेजा, "लड़की शीघ्र वापिस करो वरना मैं चढ़ाई कर दूंगा।"

इस सन्देश को सुन कर किलाध्यक्ष के पुत्र ने एक हज़ार सशस्त्र सैनिक ले छैवांग पर चढ़ाई कर दी। छैवांग शीघ्रता से एक पर्वत पर चढ़ गया और डिब्बा खोल कर चिल्लाया, "लड़ो"। डिब्बे से सैनिक निकल कर लड़ने लगे। जब उन्होंने आधी सेना खत्म कर दी तो छैवांग ने उन्हें वापिस डिब्बे में बुला लिया। उसने बोतल खोली और कहा, "बहा दो सब को।" पानी की एक तेज धारा ने बोतल से निकल शेष सैनिकों को, जिसमें किलाध्यक्ष और उसका लड़का भी था, बहा दिया।

छवांग किले में घुस लड़की को निकाल लाया और उसे अपनी पत्नी घोषित कर दिया, तथा किलाध्यक्ष की सब ज़मीन अपने अधिकार में कर ली। उसने बोतल तथा डिब्बा झील राजा को वापिस कर दिया, जिसके साथ वह सदैव मित्रता से रहा।

इस भांति सुख का सूर्य पवत की चोटी पर चमकने लगा और दुःख की कालिख नदी म बह गई।

बूढ़े ने उसे क्षमा करते हुये कहा—"बेटा, अब तो तुम समझ गये होगे कि भगवान् सबका एक है"

भगवान् सबका एक है

नीरा सक्सेना

पेरिस में इब्राहीम नाम का एक आदमी अपनी बीवी और बच्चों के साथ एक झोंपड़ी में रहता था। वह एक साधारण औकात का गृहस्थी था, पर था बड़ा धर्मात्मा और परोपकारी। उसका घर शहर से दस मील दूर था। उसकी झोंपड़ी के पास से एक पतली-सी सड़क जाती थी। एक गाँव से दूसरे गाँव को यात्री इसी सड़क से होकर आते-जाते थे।

मार्ग में विश्राम करने की और कोई जगह न होने के कारण, यात्रियों को इब्राहीम का दरवाजा खटखटाना पड़ता था। इब्राहीम उनका उचित सत्कार करता। यात्री हाथ-मुँह धोकर जब इब्राहीम के परिवार के साथ खाने बैठते तो खाने से पहले

इब्राहीम एक छोटी-सी प्रार्थना कहता और ईश्वर को उसकी कृपा के लिये धन्यवाद देता। बाद में अन्य सब व्यक्ति भी उस प्रार्थना को दुहराते।

यात्रियों का इस प्रकार सत्कार करने का क्रम कई साल तक चलता रहा। पर सदा सबके दिन एक से नहीं जाते। समय के फेर में पड़ कर इब्राहीम गरीब हो गया। तिस पर भी उसने यात्रियों को भोजन देना बन्द नहीं किया। वह और उसकी बीबी-बच्चे दिन में एक बार भोजन करते और एक बार का भोजन बचा कर यात्रियों के लिये रख छोड़ते थे। इस परोपकार से इब्राहीम को बड़ा संतोष होता, पर साथ ही साथ उसे कुछ गर्व हो गया और वह यह समझने लगा कि मैं बहुत बड़ा धर्मात्मा हूँ और मेरा धर्म ही सबसे ऊँचा है।

एक दोपहर को उसके दरवाजे पर एक थका-हारा बूढ़ा आया। वह बहुत ही कमजोर था। उसकी कमर कमान की तरह झुक गई थी और कमजोरी के कारण उसके कदम भी सीधे नहीं पड़ रहे थे। उसने इब्राहीम का दरवाजा खटखटाया। इब्राहीम उसे अन्दर ले गया और आग के पास जाकर बिठा दिया। कुछ देर विश्राम करके बूढ़ा बोला—"बेटा, मैं बहुत दूर से आ रहा हूँ। मुझे बहुत भूख लग रही है।" इब्राहीम ने जल्दी से खाना तैयार करवाया और जब खाने का समय हुआ तो अपने नियम के अनुसार इब्राहीम ने दुआ की। उस दुआ को उसके बीवी-बच्चों ने उसके पीछे दुहराया। इब्राहीम ने देखा, वह बूढ़ा चुपचाप बैठा है। इस पर उसने बूढ़े से पूछा—"क्या तुम हमारे धर्म में विश्वास नहीं करते? तुमने हमारे साथ दुआ क्यों नहीं की?"

बूढ़ा बोला—"हम लोग अग्नि की पूजा करते हैं।"

इतना सुन कर इब्राहीम गुस्से से लाल-पीला हो गया और उसने कहा—"अगर तुम हमारे खुदा में विश्वास नहीं करते और हमारे साथ दुआ नहीं करते, तो इसी समय हमारे घर से बाहर निकल जाओ।"

इब्राहीम ने उसे बिना भोजन दिये ही घर से बाहर निकाल दिया और दरवाजा लगा लिया, पर दरवाजा बन्द करते ही कमरे में अचानक रोशनी छा गई और एक देवदूत ने प्रकट होकर कहा—"इब्राहीम, यह तुमने क्या किया? वह गरीब बूढ़ा सौ वर्ष का है। भगवान् ने इतनी उम्र तक उसकी देखभाल की और एक तुम हो जो कि अपने को भगवान का भक्त समझते हो, तिस पर भी उसे एक दिन खाना नहीं दे सके, केवल इसीलिये कि उसका धर्म तुम्हारे धम से भिन्न है। संसार में धर्म भले ही अनेक हों पर भगवान् या खुदा सब प्राणियों का परम पिता है और सबके लिये वही एक ईश्वर है।"

यह कह कर वह देवदूत आँखों से ओझल हो गया। इब्राहीम को अपनी भूल मालूम हुई और वह भागा-भागा उस बूढ़े के पास पहुँचा और उसने उससे क्षमा माँगी। बूढ़े ने उसे क्षमा करते हुए कहा—"बेटा, अब तो तुम समझ गये होगे कि भगवान् सबका एक है।"

यह सुन कर इब्राहीम को बड़ा आश्चर्य हुआ क्योंकि यही बात उससे फ़रिश्ते ने भी कही थी।

नार्वे देश की लोककथा

लोमड़ी हुई रखवाली

मन्मथनाथ गुप्त

प्राचीन काल में नार्वे देश में एक बुढ़िया रहती थी, जिसके पास बहुत-सी बत्तखें थीं। बत्तखों को चराने के लिये उसके पास पहले एक लड़की रहा करती थी, पर वह किसी कारण से भाग गई, और तब से बुढ़िया को ही इन बत्तखों की देखभाल करनी पड़ती थी।

वह बोली—"कहीं तुमने इस तरह उन्हें पुकारा तो वे सबकी सब नौ-दो ग्यारह हो जायेंगी। तुमसे मेरा काम नहीं चलने का।"

बुढ़िया को इस बात से बड़ी परेशानी थी, क्योंकि घर के सारे काम-काज सम्हालना, साथ ही इन बत्तखों की देख-भाल करना बहुत मुश्किल बात थी। फिर केवल इतनी ही बात नहीं थी, प्रति सप्ताह बाजार में जा कर कुछ बत्तखों को बेच भी आना पड़ता था, जिससे कि घर के अन्य काम-काज चलें। बहुत दिनों तक ऐसा होता रहा कि वह घर के काम-काज सम्हालती रही, बत्तखों को चराती रही, और साथ ही प्रति सप्ताह कम से कम एक बार बाजार में जा कर सौदा सुलफ करती थी।

अन्त में वह इतनी परेशान हो गई कि एक दिन वह कमर कस कर बाहर निकल पड़ी

कि आज बत्तखों के लिये कोई रखवाली लड़की ढूंढ कर ही दम लेगी। मुँह अंधेरे ही वह घर से चल पड़ी।

अभी वह कुछ ही दूर गयी थी कि एक बड़े-बड़े रोयेंवाले भालू से उसकी भेंट हुई। पर बुढ़िया डरी नहीं, क्योंकि वह तो इसी इलाके की थी, और भालुओं से उसका जब-तब साबका पड़ता ही रहता था। बुढ़िया ने भालू से कहा—"नमस्ते।"

भालू ने उत्तर दिया—"नमस्ते माता जी। इतने सवेरे आज कहाँ जा रही हो?"

बुढ़िया ने कहा—"आज मैं अपनी बत्तखों के लिये एक रखवाली लड़की ढूंढने के लिये निकली हूँ और मैं पहाड़ की ओर जा रही हूँ।"

भालू ने कहा—"भला यह कौन-सी ऐसी बात है जिसके लिये तुम इतनी परेशान हो रही हो। यदि तुम चाहो तो मैं ही इस काम को कर सकता हूँ। बैठा-ठाला तो रहता ही हूँ, यदि बैठे-बैठे तुम्हारा कुछ काम मुझसे निकल जाय, तो बुरा क्या है? पड़ोसियों को एक दूसरे की मदद तो करनी ही चाहिये।"

बुढ़िया बोली—"जमाने को देखते हुये तुम्हारा यह प्रस्ताव बहुत सुन्दर है। पर हर आदमी को हर काम फबता नहीं। तुम्हारी आवाज़ इतनी भोंडी है कि उसे सुनते ही सारी बत्तखें परेशान हो जायेंगी। मुझे डर है कि तुम उन्हें इस प्रकार पुकार नहीं सकते जैसे मैं उन्हें पुकार सकती हूँ।"

भालू ने कहा—"वाह, माताजी, मैं चाहूं तो सब कुछ कर सकता हूँ।" कह कर उसने कंठ से मधुर आवाज़ निकालने की चेष्टा की और बोला—"देख मेरी आवाज़ कितनी मीठी है।"

पर बुढ़िया ने अपने कानों पर हाथ रख लिये और बोली—"बेटा यह तुम्हारा काम नहीं। तुम्हारी मधुर आवाज़ एक बैल को डराने के लिये भी काफ़ी है। बत्तख बेचारी की बात तो दूर रही।"

कह कर वह चल पड़ी। थोड़ी देर बाद एक भेड़िये से उसकी भेंट हुई। उसने भेड़िये से कहा—"नमस्ते"......इस बात को उसने ऐसा कहा जैसे भालू से कहा था।

भेड़िया बोला—"नमस्ते, नमस्ते, माता जी! आज तुम इतना सवेरे कहाँ जा रही हो।"

बुढ़िया बोली—"मैं अपनी बत्तखों के लिये एक रखवाली लड़की ढूंढने जा रही हूँ।"

भेड़िये के कान खड़े हो गये। वह चौकन्ना होकर बोला—"तुम कहाँ मारी-मारी फिरोगी? मैं बत्तखों की रखवाली का काम बहुत अच्छी तरह कर लूंगा। तुम एक बार हुक्म तो कर दो, फिर देखो कि मैं कैसा काम करता हूँ।"

बुढ़िया बोली—"मुझे यह तो मालूम है कि तुम दौड़ अच्छी लगा लेते हो, और कोई बत्तख भाग कर तुम्हारे सामने से जा नहीं सकती। पर क्या तुम उसी तरह से बत्तखों को पुकार सकते हो, जैसे मैं पुकारती हूँ।"

इस पर भेड़िया बहुत ज़ोर से चीखा और बोला—"देखो मैं किस सुन्दर तरीके से उनको पुकारूंगा।"

भेड़िये की चीख इतनी ज़ोरदार तथा भयानक थी कि बुढ़िया के रोंगटे खड़े हो गये। वह बोली—"कहीं तुमने इस तरह उन्हें पुकारा तो वे सबकी सब नौ-दो-ग्यारह हो जायेंगी। तुमसे मेरा काम नहीं चलने का।"

कह कर वह रवाना हो गई, और पहाड़ी रास्ते पर चलने लगी। इतने में एक लोमड़ी दिखाई पड़ी। लोमड़ी ने कहा—"नमस्ते माता जी, तुम आज सवेरे-सवेरे कहाँ जा रही हो? क्या मैं तुम्हारी कुछ सेवा कर सकती हूँ?"

बुढ़िया बोली—"बिना काम के कौन भला इतना सवेरे निकल पड़ेगा? मैं तो घंटे-दो घंटे घर पर और रहना चाहती थी, पर अपनी बत्तखों के लिये रखवाली लड़की ढूंढना इतना ज़रूरी हो गया है कि मुझे निकलना पड़ा। बात यह है कि मेरी रखवाली लड़की भाग गई है।"

उसने जो लौट कर यह देखा कि लोमड़ी मक्खन भी खा रही है, तो उसने उस बर्तन को उठा कर लोमड़ी पर दे मारा। लोमड़ी बहुत जोर से दौड़ी पर कुछ मक्खन उसकी पूंछ पर लग गया।

लोमड़ी ने कहा—"वाह, इतनी सी बात के लिये तुम मारी-मारी फिर रही हो? मैं बत्तखों की रखवाली करने में बहुत चतुर हूँ। मुझे ले चलो, और बत्तखों की तरफ़ से बेफ़िक्र होकर अपना काम करो।"

अब तक बुढ़िया चलते-चलते बहुत परेशान हो गई थी, इसलिये उसने न आव देखा न ताव और लोमड़ी को अपनी बत्तखों की रखवाली का काम सौंपना स्वीकार कर लिया। उसने उससे कभी प्रश्न नहीं पूछा,

और न यह देखा कि उसमें उसकार्य के लिये कोई योग्यता है भी कि नहीं। वह बोली—"अच्छा चलो मेरे साथ। मैं देखूंगी कि तुम कैसा काम करती हो। अगर तुमसे काम ठीक-ठीक न बन पड़ा, तो याद रखना कि मैं तुम्हें उसी वक्त निकाल दूंगी।"

लोमड़ी राज़ी हो गई, और बुढ़िया के साथ उसके घर पहुँची। वह पहले दिन रखवाली के लिये गई, तो उसने छः बत्तखों को खा डाला। अगले दिन भी उसने ऐसा ही किया।

बुढ़िया बेचारी को इसका कुछ पता नहीं लगा। एक तो उसे दिखाई कम पड़ता था, और दूसरे उसे गिनती भी अच्छी तरह नहीं आती थी। लोमड़ी इन बातों का फ़ायदा उठा कर रोज़ मज़े में बत्तखों का नाश्ता करती रही। इस प्रकार करते-करते एक दिन परिस्थिति यहाँ तक पहुँच गई कि एक भी बत्तख बाकी नहीं रही।

जब यह हालत पहुँच गई, और लोमड़ी बुढ़िया के पास लौटी, तो उसने देखा कि एक भी बत्तख नहीं है। बुढ़िया ने पूछा—"तुमने बत्तखों को कहाँ छोड़ दिया?"

लोमड़ी तो जवाब के लिये तैयार ही बैठी थी, बोली—"वे तालाब के किनारे हैं। न मालूम क्या ज़िद पकड़ गई कि आज मेरे बुलाने पर आई नहीं।"

बुढ़िया बोली—"मुझे ऐसा ही कुछ डर था। मुझे पहले ही समझ लेना चाहिये था कि तुम अच्छी रखवाली नहीं हो सकती। अच्छी बात है मैं खुद ही उन्हें लिवा लाने जाती हूँ।"

कह कर उसने मक्खन का बर्तन ज़मीन पर रख दिया, और तालाब की तरफ़ रवाना हो गई।

लोमड़ी ने सोचा कि बत्तखें तो मिलने से रहीं, बुढ़िया के लौटने तक यहाँ से खिसक जाना चाहिये। पर उसने जो अपने सामने मक्खन का बर्तन देखा तो उसका जी ललचा गया, और वह मक्खन खाने लग गई। अभी वह आधा भी न खा पाई थी कि बुढ़िया उधर से बिलखती चिल्लाती लौट आई। तालाब के किनारे बत्तखों की हड्डियां बिखरी हुई थीं, और उन्हें देख कर वह समझ गई थी कि दुष्ट लोमड़ी ने उन्हें खा लिया। वह बहुत तैश में थी, और अब उसने जो लौट कर यह देखा कि लोमड़ी मक्खन भी खा रही है, तो उसने उस बर्तन को उठा कर लोमड़ी पर दे मारा। लोमड़ी बहुत ज़ोर से दौड़ी पर कुछ मक्खन उसकी पूंछ पर लग गया। तब से लोमड़ी की पूंछ पर सफेद दाग़ होते हैं। उस लोमड़ी के जितने भी वंशज पैदा हुए, सब की पूंछों पर इस तरह के दाग़ पाये गये। जब भी नार्वे का कोई बच्चा किसी लोमड़ी की पूंछ पर के सफेद दाग़ को देखता है तो वह समझ जाता है कि यह उसी लोमड़ी के वंश से है, जिसने बुढ़िया की बत्तखों को खा लिया था।

ग्रिम की एक कहानी

बारह भाई

सूर्यभानु 'कपिल'

वह ओक-वृक्ष पर चढ़ कर राजभवन के गुम्बद की ओर ताकने लगा। कुछ ही देर बाद उसे लगा जैसे गुम्बद पर कोई झण्डा फहराया जा रहा है।

किसी समय एक राजा था। वह अपनी रानी के साथ सुख-पूर्वक रहा करता था। उसके बारह पुत्र थे और कन्या कोई न थी। जब रानी की तेरहवीं सन्तान उत्पन्न होने का समय हुआ, तो राजा ने एक दिन रानी से कहा—"यदि इस बार हमारे यहाँ कन्या का जन्म हुआ तो मैं बारहों पुत्रों को मार डालूँगा, ताकि वह कन्या मेरे राजपाट की मालकिन बन जाय।" इतना सुन कर रानी को अत्यन्त दुःख हुआ। वह दिन भर आँसू बहाती रही।

रानी का छोटा लड़का उसके साथ ही रहा करता था। उसका नाम बेंजामिन था। माँ को उदास देख कर उसने पूछा—"माँ, तुम दुखी क्यों हो?"

"मेरे छौना!" रानी ने आँचल से आँसू पोंछते हुए कहा—"यह बात तुम्हारे जानने की नहीं है।"

लेकिन बेंजामिन अपने हठ पर अड़ा रहा, और अन्त में रानी को सारा किस्सा बताना ही पड़ा।

माँ से सारी बातें सुनकर, उसने कहा—"माँ, तुम रोओ नहीं। हम अपनी रक्षा के लिए यहाँ से कहीं दूर चले जायेंगे।"

"हाँ," रानी ने कहा—"तुम अपने ग्यारहों भाइयों के साथ जंगल में चले जाओ। वहाँ पर जो सब से ऊँचा पेड़ हो, उस पर चढ़कर बारी-बारी से राजभवन के गुम्बद की ओर ताकते रहना। यदि तुम्हारा भाई उत्पन्न हुआ तो मैं गुम्बद पर सफेद झण्डा फहरा

दूँगी, जिसे देख कर तुम लोग वापस आ जाना। किन्तु, यदि कन्या का जन्म हुआ तो तुम्हें गुम्बद पर लाल रंग का झण्डा फहरता हुआ दीखेगा। तब तुम लोग कहीं अन्यत्र भाग जाना। शायद इस तरह तुम्हारी रक्षा हो सके।"

तदुपरान्त, माँ का आशीर्वाद पा, सारे भाई जंगल की ओर चल दिये। वहाँ पर उन्होंने एक ओक-वृक्ष चुना, और बारी-बारी से उस पर चढ़कर पहरा देने लगे।

इस तरह ग्यारह दिन बीतने पर, बेंजामिन की बारी आई और वह ओक-वृक्ष पर चढ़कर राजभवन के गुम्बद की ओर ताकने लगा। कुछ ही देर बाद उसे लगा जैसे गुम्बद पर कोई झण्डा फहराया जा रहा हो। फिर बेंजामिन ने झण्डे को गौर से देखा तो पाया कि उसका रंग सफेद नहीं बल्कि ताज़े खून-सा एकदम लाल था जो उनकी मृत्यु का द्योतक था।

जब भाइयों ने बेंजामिन से झण्डे के बारे में सुना तो उनके क्रोध की सीमा न रही। वे बोले—"केवल एक लड़की के कारण हम सब की जान क्यों ली जानी चाहिये ? हम इसका बदला लेंगे। जहाँ कहीं हमको कोई लड़की मिलेगी उसका वध हम अवश्य कर देंगे।"

इसके बाद वे जंगल में आगे तक बढ़ गए। अधिक चलने पर उन्हें वहाँ एक कुटिया दीख पड़ी जो दूर से देखने पर किसी जादूगर का निवास-स्थान-सी लग रही थी। कुटिया को खाली पाकर, उन्होंने निश्चय किया—"हम लोग अब यहीं रहेंगे और बेंजामिन चूँकि तुम सब में छोटे और कमज़ोर हो, यहीं रह कर कुटिया की देखभाल किया करोगे, और हम लोग भोजन का प्रबन्ध किया करेंगे।"

इसी तरह उन लोगों ने एक-एक कर अपने जीवन के दस वर्ष उसी कुटिया में गुज़ार दिये। समय बड़ी तेज़ी से बीता जा रहा था। इधर राजभवन में वह कन्या भी बड़ी हो गई। वह जैसी नेक और रहमदिल थी वैसा ही उसका रूप लुभावना था। उसके मस्तक पर सोने का एक सितारा हर समय लटका रहता था। एक समय, जब राज-भवन में किसी उत्सव के लिए सफाई की जा रही थी तो उस राजकुमारी ने बाहर सूखती हुई छोटी-बड़ी बारह कमीज़ों को देखा। उसने रानी से पूछा—"माँ, ये कमीजें किसकी सूख रही हैं ? इतनी छोटी कमीजें पिता जी की तो हो नहीं सकतीं !"

रानी ने एक लम्बी सांस लेकर कहा—"मेरी बच्ची, ये कमीजें तेरे बारह भाइयों की हैं।"

"मेरे बारह भाई !" राजकुमारी ने आश्चर्य-चकित होकर पूछा—"यह कैसे सम्भव है ? मैंने तो आज तक उनके बारे में कुछ सुना तक नहीं। आख़िर वे सब हैं कहां ?"

"भगवान ही जाने," रानी ने रुंधे-कंठ से कहा—"बेचारे इस समय न जाने कहाँ भटक रहे होंगे।" फिर रानी ने राजकुमारी को बताया कि किस प्रकार कन्या के जन्म लेने पर राजा ने पुत्रों को मार डालने की प्रतिज्ञा कर ली थी।

"ओह माँ, तुम रोओ मत !" सारी बात सुनकर राजकुमारी ने कहा—"अब मैं अपने भाइयों को खोजकर लाऊँगी।"

अगले दिन राजकुमारी अपने साथ बारहों कमीज़ लेकर जंगल की ओर चल पड़ी।

वह दिन भर भाइयों की तलाश में घूमती फिरी, और शाम होते-होते उसी कुटिया के निकट जा पहुँची। कुटिया में प्रवेश करने पर उसे बेंजामिन दीख पड़ा। बेंजामिन ने पूछा—"तुम कौन हो? कहाँ से आई हो?"

"मैं एक राजा की कन्या हूँ," राजकुमारी ने बताया—"और मैं अपने बारह भाइयों को खोज रही हूँ।" कह कर उसने बेंजामिन को बारहों कमीजें दिखा दीं।

बेंजामिन एकदम समझ गया कि यही उसकी बहन है। उसने तुरन्त पुलकित होकर कहा—"मैं तुम्हारा छोटा भाई बेंजामिन हूँ।"

तब दोनों भाई बहन गले मिले। हर्ष के आवेग में उनकी आंखों से आंसू बह निकले।

"प्यारी बहन," शान्त होने पर बेंजामिन ने कहा—"मैं तुम्हें एक बात बता दूँ। हम लोगों ने यह निश्चय किया हुआ है कि जिस भी लड़की को हम पायेंगे उसे जान से मार डालेंगे, क्योंकि लड़की के ही कारण हमको अपना राजपाट त्यागना पड़ा था।"

तब राजकुमारी ने कहा—"अब मुझे मरने की कोई चिन्ता नहीं मेरे मरने पर भाइयों की जान तो बच जायगी।"

"नहीं," बेंजामिन बोला—"मैं तुम्हें अब मरने न दूंगा। तुम इस लकड़ी के संदूक में छिप जाओ। अन्य भाइयों के लौटने पर मैं सबसे भुगत लूंगा।"

राजकुमारी बेंजामिन के कहने के अनुसार छिप गई। सूरज छिपे शेष ग्यारह भाई शिकार से लौटे। जब वे सब लोग खाना खाने बैठे तो एक भाई ने पूछा—"आज का कोई नया समाचार?"

"हाँ, हाँ," बेंजामिन बोला—"लेकिन, सुनने से पूर्व प्रतिज्ञा करो कि जिस पहली लड़की को तुम देखोगे, जीवित छोड़ दोगे।"

"बहुत अच्छा," सब भाई एक साथ बोल उठे।

"हम प्रतिज्ञा करते हैं कि उसका बाल भी बांका न होने देंगे। अब झटपट समाचार सुनाओ।"

"यहाँ हमारी बहन है।" बेंजामिन ने कहा और संदूक का ढक्कन उलट दिया। राजकुमारी हर्षातिरेक से झूमती बाहर निकल आई। वह राजसी वस्त्र पहिने हुए थी। उसके मस्तक पर सोने का तारा झूल रहा था। वह बहुत ही रूपवती, भोली और आकर्षक लग रही थी। बहन को पाकर सब भाई प्रसन्न हो उठे। वे उससे गले मिले, उसके मस्तक को बार-बार चूमा और उसे खूब ही प्यार किया।

अब राजकुमारी बेंजामिन के साथ ही रहने लगी और घर के काम में हाथ बटाने लगी।

उसकी कुटिया के पास एक छोटा-सा बग़ीचा था। उसमें लिली के बारह फूल खिले हुए थे। राजकुमारी ने सोचा कि यदि ये फूल तोड़कर भाइयों की कमीजों में लगा दिये जाएं तो कितना अच्छा रहे। लेकिन उसने जैसे ही उन फूलों को तोड़ा वैसे ही उसके बारहों भाई हंस बनकर जंगल से ऊपर दूर आकाश में उड़ गये। साथ ही उसकी कुटिया

उसने जैसे ही उन फूलों को तोड़ा वैसे ही उसके बारहों
भाई हंस बनकर जंगल से ऊपर दूर आकाश में उड़ गये।

और वह बाग़ीचा भी ग़ायब हो गए। अब वह उस जंगल में अकेली रह गई, और आंखें फाड़-फाड़ कर इधर-उधर देखने लगी। तभी उसे एक बुढ़िया दिखाई पड़ी।

"मेरी बच्ची," बुढ़िया ने कहा—"तुम्हें इन फूलों को तोड़ने की ऐसी क्या पड़ी थी ? वे हो तुम्हारे बारह भाई थे, जो अब हमेशा के लिये हंस बन कर उड़ गये।"

"आह !" राजकुमारी के मुँह से निकला। उसकी आंखों से आंसुओं की धार बह निकली। उसने रोते-रोते पूछा—"क्या अब कोई उपाय नहीं, जिससे वे फिर अपने असली रूप में आ सकें ?"

"नहीं," बुढ़िया बोली—"अब इनका असली रूप पाना कठिन ही है। लेकिन एक उपाय है, जो तुम्हारे लिये आसान नहीं। तुम्हें सात वर्ष तक मौन रहना पड़ेगा। न तुम बोल ही सकोगी और न हँस सकोगी। और यदि तुम्हारे मुँह से एक शब्द भी निकला तो तुम्हारे सब भाई उसी क्षण मर जायंगे।"

इस पर राजकुमारी ने मन-ही-मन निश्चय किया कि वह अपने भाइयों को फिर से पायेगी, और वह जंगल के सबसे ऊंचे ओक-वृक्ष पर चढ़ कर बैठ गई। अब न तो

वह बोलती ही थी और न हँसती ही थी। दिन भर बैठी-बैठी वह केवल सूत काता करती थी।

एक समय ऐसा हुआ कि एक राजकुमार उस जंगल में शिकार खेलने आया, और थक कर उसी पेड़ के नीचे विश्राम करने लगा। ऊपर बैठी हुई राजकुमारी को देखकर वह उस पर रीझ गया और उसने राजकुमारी से विवाह का प्रस्ताव किया। उत्तर में राजकुमारी ने केवल सिर हिला कर अपनी स्वीकृति दे दी।

तब राजकुमार ने पेड़ पर चढ़ कर राजकुमारी को नीचे उतारा और घोड़े पर बिठा कर घर चला आया। वहाँ पर उसने राजकुमार से शादी कर ली और आनन्द से रहने लगा। किन्तु, अब भी वह न तो किसी से कुछ बोलती और न किसी बात पर हँसती ही था।

इसी प्रकार राजकुमारी के कुछ दिन सुखपूर्वक बीत गये। किन्तु, राजकुमार की माँ को जो हृदय से बड़ी दुष्टा थी, राजकुमारी का गुमसुम रहना अखरने लगा। उसने राजकुमार से कहा—"मैं समझती हूँ, कि तुम किसी भिखारिन को घर में ले आये हो। वह यदि गूंगी है, तो कम-से-कम हँस तो सकती है। जो कोई हँसता तक नहीं, उसका दिल जरूर काला होता है।"

पहले तो राजकुमार ने रानी की बात पर कोई ध्यान न दिया, लेकिन अन्त में उसको रानी की मनगढ़ंत बातों पर विश्वास आ गया और उसने राजकुमारी को मौत की सजा दे दी।

राजभवन की चहारदीवारी में एक बहुत बड़ा अलाव लगाया गया। राजकुमारी को अलाव के पास एक खूंटे से कस कर बांध दिया गया। आग की लपटें राजकुमारी के कपड़ों को छूने लगीं। किन्तु तभी सात वर्ष के मौन-व्रत का अन्तिम पल भी बीत गया और यकायक आकाश से पंख फड़फड़ाते हुए बारह हंस राजभवन के आंगन में उतरे। धरती पर आते ही वे बारहों हंस मनुष्य बन गये। वे सब राजकुमारी के भाई ही थे और अब जादू का प्रभाव उन पर से जाता रहा था। सब भाइयों ने मिल कर झटपट सारी लकड़ियां हटाई और आग बुझा दी। फिर अपनी प्यारी बहन के बंधन काट कर उसे खूब प्यार किया। अब राजकुमारी खूब हँस-बोल सकती थी। उसने अपने पति को बताया कि वह क्यों अब तक गूंगी रही थी और हँसती तक न थी। राजकुमार भी पत्नी को निर्दोष पाकर प्रसन्नता से खिल उठा, और उनका जीवन आनन्दपूर्वक व्यतीत होने लगा।

उसकी दुष्टा सास को फिर दरबार में पेश किया गया और सब की राय से उसे मृत्यु-दंड मिला।

किसान ने उत्तर दिया, "एक से मैं खाना खाता हूँ, दूसरा उधार देता हूँ, तीसरा चुका देता हूँ और चौथा कुएं में फेंक देता हूँ।"

इटली की एक पुरानी कहानी

चतुर किसान

गीधड़ाराम सुगंध

एक दिन एक किसान अपना खेत जोत रहा था। उसी समय राजा उस रास्ते से गुज़रा। राजा ठहर गया और उसने किसान से पूछा, "तुम एक दिन में कितना कमा लेते हो?"

किसान ने जवाब दिया, "मैं केवल चार आने कमा पाता हूँ।"

राजा ने पूछा, "तुम उनका क्या करते हो?"

किसान ने उत्तर दिया, "एक से मैं खाना खाता हूँ, दूसरा उधार देता हूँ, तीसरा चुका देता हूं और चौथा कुएं में फेंक देता हूँ।"

राजा उसका मतलब नहीं समझ सका। इसलिये उसने किसान से इसे स्पष्ट करने को कहा। किसान ने उत्तर दिया, "श्रीमान, पहले से मैं अपना और अपनी स्त्री का भरण-पोषण करता हूँ। दूसरा मैं बच्चों को खिला-पिला देता हूँ। वे मुझे बदला देंगे अर्थात् मेरी खबरगीरी

करके मुझे वापिस चुका देंगे जब कि मैं बूढ़ा और कमजोर हो जाऊंगा और काम करने में असमर्थ हूंगा। तीसरे से मैं अपने पिता जी को खिलाता हूँ। इस प्रकार मैं पिता जी का ऋण चुकाता हूँ जो कुछ उन्होंने भूतकाल में मेरे लिये किया है। चौथा दान में चला जाता है जिसके लिये मैं इस दुनिया में कोई पुरस्कार या फल की आशा नहीं करता।"

राजा बहुत खुश हुआ और उसने किसान से कहा कि जब तक तुम मेरा मुँह सौ बार नहीं देख लो तब तक इन प्रश्नों का जवाब किसी को भी नहीं बतलाने की प्रतिज्ञा करो। किसान ने किसी को भी इसका उत्तर नहीं बताने की प्रतिज्ञा की और अपने काम में लग गया।

दूसरे दिन जब कि राजा अपने मंत्रियों के साथ बैठा हुआ था उसने उनसे पूछा, "आप लोगों के लिये एक प्रश्न जवाब देने के लिये है। इस देश में एक किसान है जो चार आने रोज कमाता है। पहला वह खाता है, दूसरा उधार दे देता है, तीसरा चुका देता है और चौथा कुएं में डाल देता है।" मंत्रियों ने बहुत माथा मारा किन्तु इसका उत्तर नहीं पा सके।

मंत्रियों में से एक को यह पता था कि राजा की कल एक किसान से बातचीत हुई है। इसलिये वह उसी किसान के पास गया और उसने राजा द्वारा उनको जो प्रश्न पूछा गया था उसका अर्थ बतला देने की प्राथना की।

किसान ने कहा, "मुझे बहुत अफ़सोस है जब तक मैं राजा का सौ बार मुँह नहीं देख लूं तब तक मैं आपको इस प्रश्न का उत्तर नहीं बतला सकता।" मंत्री फ़ौरन किसान का मतलब समझ गया। उसने सौ सोने के सिक्के किसान को चुका दिये जिन पर राजा की मोहर-छाप थी। तब किसान ने उस प्रश्न का उत्तर बता दिया।

मंत्री उत्तर मालूम कर राजा के पास गया। राजा ने कहा, "तुमने अवश्य उस किसान से इसका अर्थ पूछा है।"

राजा ने किसान को बुलाया और उससे पूछा, "तुमने अपनी प्रतिज्ञा क्यों नहीं निभाई ?"

किसान ने उत्तर दिया, "महोदय, मंत्री जी को जवाब बतलाने से पहले मैंने राजा का (आप का) चेहरा सौ बार देख लिया था।"

तब उसने राजा को सौ सोने की मुद्राओं की थैली दिखलाई। राजा किसान की चतुराई से इतना ज्यादा प्रसन्न हुआ कि उसने उसको सौ सोने के सिक्के और अधिक इनाम में दिये।

युवक ने अपनी पगड़ी से दोनों पंख निकाल कर उसे दे दिये और कहा—
"सूर्यदेव ने तुम्हारे लिए ये पंख भेजे हैं। वह तुम पर प्रसन्न हैं।"

एक रेड इंडियन लोककथा

सूरज की खोज में

मोहनसिंह सामन्त

बहुत पुराने ज़माने की बात है। उस समय युद्ध का नामोनिशान भी नहीं था। सभी जातियां शान्तिपूर्वक रहा करती थीं। उस ज़माने में एक सुन्दर लड़की थी। अनेक लोग उससे शादी करना चाहते थे; लेकिन जब कभी उससे शादी करने के लिए कहा जाता तो वह अपना सिर हिला कर कहती—"मैं शादी नहीं करूंगी।"

उसी के गाँव में नदी के किनारे एक सुन्दर निर्धन युवक रहता था। उसके एक गाल पर घाव का दाग़ था। उस नदी में पानी भरने के लिए जिस घाट पर स्त्रियां जाया करती थीं वहीं वह युवक उस सुन्दरी युवती की राह देखा करता था।

उस युवती को देखकर एक युवक ने कहा, "तुमने धनवानों को भी दुत्कार दिया है और मैं तो दरिद्र हूँ—महादरिद्र। मेरे पास घर-द्वार और अन्न-वस्त्र नहीं हैं। परिवार नाम की चीज़ मेरे यहाँ है ही नहीं; क्योंकि मेरे सभी सगेसोई मृत्यु के ग्रास हो गये हैं। फिर भी मैं तुमसे दया की भीख माँगता हूँ और चाहता हूँ कि तुम मेरी पत्नी बनो।"

उस लड़की पर युवक की दीनता का बड़ा प्रभाव पड़ा। कुछ क्षण के बाद वह

बोली—"मैंने धनवानों को भी दुत्कार दिया है यह सच है; फिर भी एक दरिद्र मुझ से शादी करना चाहता है, इस बात से मुझे कौतूहल हो रहा है। मैं तुम्हारी पत्नी बन सकती हूँ। मेरे पिता तुम्हें अन्न-वस्त्र से भर देंगे।"

युवक प्रफुल्ल हो उठा, परन्तु लड़की ने कहा—"मगर मैं सूर्यदेव की आज्ञा बिना शादी नहीं कर सकती। इसीलिए मैं कहती हूँ कि तुम जाकर सूर्यदेव से कहो—"हे देव, वह तुम्हारी बातों पर अब तक अटल है और उसने अब तक कोई अधर्म नहीं किया है; पर अब वह शादी करना चाहती है, और मैं उसे पत्नी बनाना चाहता हूँ।" इसके सिवा उनसे अपने गाल का दाग मिटाने की भी प्रार्थना करना। यह दाग मिट जाएगा तो समझूंगी कि सूर्यदेव प्रसन्न हैं। अगर वह अस्वीकार करें या तुम उनका आश्रम नहीं पा सके तो अपशकुन समझूंगी और तब तुम्हें मेरे पास आने की कोई जरूरत नहीं।"

हताश युवक बोल उठा—"ओह! पहले तुमने कितनी मीठी बातें कहीं; पर अब तुम यह क्या कहने लगीं? न जाने, सूर्यदेव का आश्रम कितनी दूर है और न जाने वह रास्ता ही किधर है जिससे होकर आज तक कोई नहीं जा सका!"

"साहस से काम लो" यह कह कर वह चली गई।

दुखित युवक ने बिलकुल अकेले यात्रा की। जाते समय मुड़कर अपनी झोंपड़ी की ओर अन्तिम बार देखा। उसे लगा मानो अब वह फिर लौट कर नहीं आ सकेगा। उसने मन-ही-मन सूर्यदेव से प्रार्थना की—"हे सूर्यदेव, मुझ पर दया करो।" और सूर्यदेव के आश्रम तक जाने की राह खोजते हुए रवाना हो गया।

'प्रेरी' के मैदानों, पेड़-पौधों से भरी नदियों और पर्वतों को पार करता हुआ वह बढ़ता गया; पर दिनों-दिन उसकी भोजन-सामग्री का बोरा हलका होता गया। राह में उसने लोमड़ी, भालू और बैजर (भालू का-सा जानवर) से सूर्यदेव के नगर का पता पूछा, पर किसी को उस राह का पता ही नहीं था। अन्त में एक भेड़िये ने समुद्र से होकर उसका रास्ता बताया। उसने कहा—"सूर्यदेव इसके उस पार रहते हैं।"

बहुत दिनों के बाद युवक समुद्र के किनारे जा पहुँचा; मगर वहाँ पहुँचने पर उसका दिल बैठने लगा। उसे समुद्र का दूसरा छोर दिखाई ही नहीं पड़ता था—जल का कहीं अन्त नहीं था।

जिस समय वह अपार समुद्र की ओर असहाय होकर ताक रहा था उस समय दो हंस तट पर आ पहुँचे और उन्होंने पूछा—"तुम यहाँ क्यों आये हो?"

युवक ने जवाब दिया—"मौत ही मुझे यहाँ खींच लाई है। यहाँ से बहुत दूर हमारे देश में एक रूपवती लड़की है। मैं उससे शादी करना चाहता हूँ, पर वह सूर्य के अधीन है। मैं उस लड़की के साथ शादी करने के लिए सूर्यदेव से अनुमति लेने आया हूँ; पर सूर्यदेव का आश्रम खोज ही नहीं पा रहा हूँ। अब मैं इस अपार सागर को पार करके वापस नहीं जा सकूंगा और इस तरह अन्त में मैं यहीं मर मिटूंगा।

हंसों ने कहा—"नहीं-नहीं, ऐसा नहीं होगा। इस जल-राशि के पार सूर्यदेव का आश्रम है। हम लोग तुम्हें वहाँ तक पहुँचा देंगे।"

इसके बाद हंसों ने उसे दूसरे तट पर निरापद पहुँचा दिया और कहा—"अब तुम

सूर्यदेव के आश्रम के बिलकुल निकट आ गये। इसी पगडंडी से चले जाओ; तुम्हें सूर्य-देव के दर्शन होंगे।"

युवक उसी पगडंडी से होकर चल पड़ा। कुछ ही देर के बाद उसकी एक नवयुवक आगन्तुक से मुलाकात हुई। आगन्तुक ने पूछा—"रास्ते में तुमने कुछ अस्त्र पड़े देखे थे?"

युवक ने कहा—"हाँ, मैंने उन्हें देखा था।"

"उन्हें छुआ तो नहीं?"

"ना! वे मेरी चीजें नहीं थीं; इसीलिए मैं उन्हें छोड़ कर चला आया।"

आगन्तुक ने कहा—"तुम ईमानदार हो। कहाँ जा रहे हो?"

"सूर्यदेव के यहाँ।"

आगन्तुक ने कहा—"मेरा नाम लालतारा (भोर का तारा) है। सूर्यदेव मेरे पिता हैं। दिन भर का काम खत्म करके ही वह तुम से मुलाकात कर सकेंगे।"

कुछ ही देर बाद दोनों आश्रम पहुँच गये। आश्रम में सूर्यदेव की पत्नी और लालतारा की माँ चन्दारानी (चन्द्रमा) थीं। चन्दारानी ने युवक से स्नेहपूर्वक बातें कीं और फिर भोजन कराया। दिन बीतने पर सूर्यदेव घर आये। जब उनको मालूम हुआ कि युवक किसी खास उद्देश्य से आया है और लालतारा ने उसकी ईमानदारी परख ली है तो बोले—"तुम्हारे आने से मैं खुश हूँ। जब तक तुम्हारी मरजी हो तब तक हम लोगों के साथ रहो। लालतारा तो तुम्हारा मित्र हो ही चुका है!"

दूसरे दिन चन्दारानी बोलीं—"लालतारा के साथ जहाँ खुशी हो, वहाँ जा सकते हो; लेकिन इस विस्तीर्ण जल-राशि से इसे बचाते रहना, क्योंकि जल में बड़े-बड़े दुष्ट पक्षी रहते हैं।'

युवक बहुत दिनों तक वहाँ रहा और लालतारा के साथ शिकार खेलता रहा। एक दिन उन्होंने समुद्र के किनारे भयंकर जल-पंछियों को देखा। लालतारा ने कहा,—"चलो, हम लोग चिड़ियों को मारें।"

मित्र ने जवाब दिया—"न न, हम लोगों को वहाँ नहीं जाना चाहिए।"

लेकिन लालतारा ने उसकी एक न सुनी। वह जल की ओर दौड़ा। लालतारा की रक्षा करने के कर्त्तव्य का उसे हमेशा ख्याल रहता था। इसलिए वह लालतारा के साथ ही दौड़ पड़ा और बरछे से उन पंछियों को मार डाला, क्योंकि वे लालतारा के शरीर पर चोंच मारने को झपटते आ रहे थे।

इस भलाई के लिये लालतारा की माँ बड़ी कृतज्ञ हुई और रात को जब सूर्यदेव ने यह घटना सुनी तो वे भी बहुत खुश हुए। बोले—"वत्स, आज तुमने मेरे लिए जो कुछ किया है सो मैं कभी नहीं भूलूंगा। कहो, मैं तुम्हारा क्या उपकार करूं?"

युवक ने उत्तर दिया—"मैं आपकी दया के लिए ही यहाँ ठहरा हुआ हूँ। मैं जिससे विवाह करना चाहता हूँ वह लड़की कहती है कि शायद आपने उसे दूसरे के साथ विवाह करने से मना किया है।"

सूर्यदेव बोले—"तुम्हारा कहना सत्य है। वह सुशीला अपने पति और सन्तति के साथ दीर्घायु प्राप्त करेगी। जो हो, अब तुम अपने घर जा सकते हो; मगर जाने से पहले मेरे साथ चलो और संसार को देख लो।"

यह कह कर सूर्यदेव युवक को आकाश के एक छोर पर ले गये और वहाँ से उन्होंने दिखाया—धरती गोलाई लिए हुए कुछ चपटी है।

सूर्यदेव ने कहा—"तुम धरती के लोगों के लिए एक सन्देश लेते जाओ। जब कोई बीमार हो या विपत्ति में पड़ा हो तो उसकी पत्नी मेरी इस तरह मिन्नत करे—"अगर मेरे पति नीरोग हो जाएंगे तो मैं सूर्यदेव के लिए मन्दिर बनवाऊंगी।" अगर वह शुद्ध और सच्चे मन से ऐसा करेगी तो मैं खुश होऊंगा और बीमार व्यक्ति को नीरोग कर दूंगा। तुम मेरे लिए जो मन्दिर बनवाओगे सो धरती की तरह ही गोल होना चाहिए। हाँ, पहले एक सौ लोहे की छड़ों से एक सुन्दर घेरा तैयार कर लेना। वह मकान आकाश या धरती की गोलाई की तरह का ही होगा। उसका आधा भाग लाल रंग से रंगा हुआ होना चाहिए। यह रंगा हुआ भाग 'दिन' कहलाएगा। आधे को काले रंग से रंग देना। यही हिस्सा होगा—'रात'।

इतना कह कर सूर्यदेव ने एक अमोघ औषधि उसके गाल पर मल दी जिससे घाव का दाग मिट गया। इसके बाद उन्होंने डोम कौए के दो पंख दिये और कहा—"आरोग्य-मन्दिर बनानेवाली स्त्री का पति इन्हें अवश्य धारण किया करे।"

लालतारा और चन्दारानी ने भी उसे बहुत सी चीजें उपहार में दीं। चन्दारानी ने रोते हुए आशीष देकर युवक को बिदा किया। सूर्यदेव ने निकटतम राह दिखा दी। वह राह 'आकाशगंगा' थी। युवक उसी राह से होता हुआ घर पहुँच गया।

जब उसने अपनी बेशकीमत पोशाकें उतारीं तो लोगों के आश्चर्य की सीमा न रही। उसने अत्यन्त सुन्दर कपड़े पहन रखे थे। उसके तीर-कमान, ढाल-तलवार और अन्यान्य शस्त्रास्त्र विचित्र ढंग के थे। फिर भी लोगों ने उसे पहचान लिया और स्नेह-पूर्वक उसका स्वागत किया।

वह लड़की अब तक युवक की प्रतीक्षा कर रही थी। युवक ने अपनी पगड़ी से दोनों पंख निकाल कर उसे दे दिये और कहा—"सूर्यदेव ने तुम्हारे लिए ये पंख भेजे हैं। वह तुम पर प्रसन्न हैं।"

इस बात से लड़की बड़ी खुश हुई। फिर दोनों की शादी हो गई। उन्होंने सूर्यदेव की कृतज्ञता प्रकट करने के लिए प्रथम आरोग्य-मन्दिर बनवाया। सूर्यदेव ने उन्हें दीर्घायु बनाया। वे लोग जीवन भर बीमार नहीं पड़े।

उत्तरी रूस की लोक-कथा
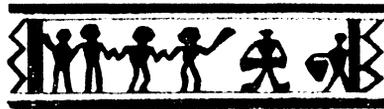
सोनिया और बारह महीने

सरोज हरिभूषण

उत्तरी रूस के एक जंगल के पास एक गांव में एक आदमी रहता था। उसकी पत्नी मर गई थी। उसकी एक नेक लड़की थी जिसका नाम सोनिया था। कुछ समय बाद उसके पिता ने एक विधवा से विवाह किया। इसकी भी एक लड़की थी। उसका नाम नताशा था। वे दोनों माँ-बेटियां बहुत बुरी थीं, सोनिया को हर समय तंग करना ही उनका काम था। नताशा और उसकी माँ सोनिया से दिन भर काम करातीं और स्वयं बैठी रहतीं। इस पर भी वे उसको न तो पेट भर भोजन देतीं और न अच्छे कपड़े पहनने को देतीं। उसका पिता अपनी नई दुष्ट पत्नी के डर से कुछ भी न कह पाता था।

एक दिन खूब जाड़ा पड़ रहा था। बर्फ गिर रही थी तो सोनिया की सौतेली माँ ने उससे कहा—"जा जल्दी से जंगल में जाकर स्ट्राबेरी चुन ला।"

वह स्ट्राबेरियों की ऋतु नहीं थी इसलिये सोनिया ने कहा—"माँ, यह तो बर्फ की ऋतु है। आजकल यह फल नहीं मिलेगा, मैं कहाँ से लाऊं?" मगर उसकी सौतेली माँ ने एक न सुनी और उसे एक डोलची देकर दरवाजे से बाहर निकाल दिया। पर बर्फ में स्ट्राबेरी कहाँ से आती? इसी प्रकार शाम हो गई और वह रोती हुई वापस लौटने लगी। उसे यह डर था कि कहीं भेड़िये न खा जायं। इस लिए वह तेज़ कदम उठाने लगी, और घर का रास्ता भूल कर घने जंगल में पहुँच गई। अब वह फूट-फूट कर रोने लगी। इतनी ही देर में उसे दूर से एक रोशनी दिखाई दी। उसकी कुछ हिम्मत बंध गई।

वह उसी रोशनी की सीध में पहुँची तो क्या देखा कि एक बड़ा सा अलाव जल रहा है, और उसके चारों ओर एक घेरे में बारह आदमी बैठे हाथ सेंक रहे हैं। ज्यों ही उन आदमियों ने इस बालिका को देखा, उनमें से एक ने जिसके हाथ में एक राजदण्ड था पूछा—"बेटी तुम कौन हो? यहाँ इस समय क्यों आई हो?" यह कह उसे आग के पास बिठा लिया। जब सोनिया कुछ स्वस्थ हुई तो वह बोली—"मुझे अपनी सौतेली माँ ने आज स्ट्राबेरी लाने के लिये कहा है" और उसने सारी बात कह सुनाई।

वह आदमी बारह मास थे, उनमें से जिसके हाथ में राजदण्ड था वह दिसम्बर का मास था। उसने अपना राजदण्ड मई मास को दे दिया और कहा—"आप थोड़े समय के लिये राज करें।" मई मास के राज्यदण्ड लेते ही एकदम बरफ़ पिघल कर नीचे से स्ट्राबेरियां निकल आईं। सोनिया ने जल्दी जल्दी अपनी डोलची भर ली और नमस्ते करके घर को चल दी। इसके बाद मई ने फिर राजदंड दिसम्बर के हवाले किया।

सोनिया की सौतेली माँ इस ऋतु में स्ट्राबेरियां देख कर चकित हो गई। उसने तो यह सोच रखा था कि सोनिया को स्ट्राबेरी कहाँ से मिलेगी, पर भेड़िये तो अवश्य मिलेंगे और उसे खा जायेंगे। कुछ समय बीत गया और नताशा और उसकी माँ ने फिर से सलाह करके सोनिया को वसंत ऋतु के एक फूल को लाने को कहा। बेचारी को फिर जाना पड़ा। वह

फिर उसी तरह रोती-पीटती जंगल में गई और चिल्ला-चिल्ला कर कहने लगी—"बारह महीनो ! बारह महीनो ! कृपा करें और मुझे फूल दे दें।"

वह फिर उसी स्थान पर आ गई जहाँ पहले वे उसे मिले थे। उसने सब हाल कह सुनाया। अब राजदण्ड मार्च को कुछ समय के लिये दिया गया। बस एक दम मार्च की जैसी ऋतु हो गई और फूल निकल आये। सोनिया ने झट से फूल ले लिये और भाग कर घर आ गई।

जिसके हाथ में एक राजदण्ड था, उसने पूछा—"बेटी तुम कौन हो ? यहाँ इस समय क्यों आई हो ?" यह कह उसे आग के पास बिठा लिया।

सौतेली माँ उसे देखकर सोचने लगी कि सोनिया की जरूर कोई जादूगर जंगल में मदद करता है, इसलिए उसने अपनी बेटी नताशा को भी भेजा। नताशा जब उन महीनों के पास पहुँची, तो उसने उनके प्रश्न का उत्तर बहुत बुरी प्रकार से दिया। इस पर दिसम्बर मास को क्रोध आया और उसने खूब बर्फ गिरानी शुरू की। नताशा घर का रास्ता भूल गई और बर्फ में दब कर मर गई।

जब वह कई दिनों तक लौट कर न आई तो माँ उसको ढूंढने निकली और उसे भी अपने दुष्ट कर्मों का फल मिला, उसे एक भेड़िया खा गया। अब सोनिया अपने बाप के साथ आनन्द से रहने लगी। कुछ समय के बाद एक राजकुमार उस जंगल के पास से निकला और रात भर इसी गांव में सोनिया के पिता के घर ठहरा। वह सोनिया की बुद्धिमत्ता और अतिथिसत्कार को देख कर प्रसन्न हुआ और उस से विवाह कर लिया।

★

इस पुस्तक के लेखक

१. मन्मथनाथ गुप्त— अनेक पुस्तकों के लेखक। बाल-साहित्य में बंगला की लोक-कथाएं फ्रेंच लोक-कथाएं, देश विदेश की कहानियां और रंग मंच प्रकाशित हुए।

२. सावित्री देवी वर्मा— बाल-मनोविज्ञान पर 'आपका मुन्ना,' पुस्तक की लेखिका। बाल साहित्य में कथा-भारती, जंगल-ज्योति, शेक्सपियर की कहानियां कथा-कहानी (बाल-पंचतंत्र) और उत्तर प्रदेश की लोक-कथाएं आदि पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं।

३. अवनीन्द्र— प्रसिद्ध हिन्दी-लेखक और संपादक।

४. टोमोजी मूता— जापान के हिन्दी लेखक।

५. महादेव करमारकर—हिन्दी के उदीयमान लेखक।

६. व्लादिमीर मिल्तनेर—चेक लोक-कथा के अनुवादक।

७. गीता कृष्णाश्री— आप अपने पति के साथ तिब्बत गई थीं। वहीं से आपने दो लोक-कथाएँ लिखकर भेजी हैं।

८. द्रोणवीर— हिन्दी के एक पंजाबी लेखक।

९. नीरा सक्सेना— हिन्दी की उदीयमान लेखिका।

१०. सूर्यभानु 'कपिल'— हिन्दी लेखक

११. सीताराम सुगन्ध आपकी अनेक रचनाएँ बाल-भारती में छपी हैं।

१२. मोहनसिंह सामन्त— हिन्दी के उदीयमान लेखक।

१३. सरोज हरिभूषण— हिन्दी लेखक।

★